


प्रस्तावना ।



सुखविपाक, विपाकसूत्र का दूसरा स्कन्ध है। इस के दश अध्यायनों में दश कुमारों की कथाओं द्वारा पुण्य का साक्षात् फल स्वर्गादि की प्राप्ति और परंपरा फल मोक्ष की प्राप्ति, बताया गया है। इसकी पूर्णता ज्ञाता धर्मकथाङ्ग औपपातिक रायपसेनी भगवती आदि के पाठों से की गई है। इसलिये सुखविपाक सूत्र अब तक बहुत सक्षिप्त मिलता था। प्रायः सब प्रतियों में किस जगह का कितना पाठ लेना चाहिए, ऐसी सूचना मात्र रहती थी। इससे पाठकों को उतना लाभ न होता था जितना होना चाहिए। फलतः पाठकों को इसके पूर्ण लाभ से वंचित रहना पड़ता था। इस कमी की पूर्ति करने के लिये हमने एक प्राचीन प्रति के आधार से संस्कृत प्राकृत न जानने वाले पाठकों के लाभ के लिये हिन्दी में अनुवाद कराकर प्रकाशित करने का विचार किया था। हर्ष है, आज हमारा विचार सफल हुआ और आपके सामने इसे रखने का अवसर प्राप्त हुआ।

पाठकों के सुभीते के लिये, जो पाठ जहाँ से लिये गये हैं, उनका टिप्पणी में उल्लेख कर दिया है। टिप्पणी में सूत्रों की पृष्ठ पकित आग-मोक्ष समिति के सूत्रों के अनुसार दी गई है।

अन्त में निवेदन है, कि यदि अनुवाद आदि में कोई त्रुटि रह गई हो, तो विद्वान् पाठक सुधार लें। और कृपया हमें सूचना दे दें, ताकि अगली आवृत्ति में उनका सुधार कर दिया जाय।

निवेदक— सा. क्र.

सेठिया जैन ग्रन्थालय
वीकानेर

28-7-26

भैरोंदान जेठमल-साठियर

सुवाहुकुमार के बहोत्तर कला पढाने का वर्णन ।	४६
सुवाहुकुमार के लिए ५०० प्रासाद तथा भवन कराने का वर्णन ।	५२
सुवाहुकुमार से पुष्पचूला प्रमुख ५०० कन्याओं का पाणिग्रहण- (लग्न) कराने का वर्णन ।	५५
एक सौ बाण १९२ वस्तुओं का दहेज देने का वर्णन	५६
महावीर प्रभु का हस्तिशीर्ष नगर में समवसरण ।	६३
सुवाहुकुमार का प्रभु के दर्शन करने को जाने का वर्णन	७५
सुवाहुकुमार के वारह व्रत अङ्गीकार करने का वर्णन ।	७७
श्री गौतमस्वामी का वर्णन ।	७८
श्री गौतमस्वामी का श्री महावीर स्वामी प्रति सुवाहुकुमार के पूर्वभक्त का प्रश्न ।	८०
श्री महावीरस्वामी का श्रीगौतमस्वामी प्रति सुवाहुकुमारके पूर्व- भक्त का वर्णन करना ।	८१
सुमुख गाथापति तथा सुदत्त अण्णगर का वर्णन	८१
सुदत्त अण्णगर को प्रतिलाभने (दान देने) से सुमुख गाथा- पति के घर में पञ्चदिव्य प्रकट होने का वर्णन	८२
श्रीमहावीर प्रभु का हस्तिशीर्ष नगर से विहार ।	८५
सुवाहुकुमार के पोषे का करना और शुभभावना का माना तथा श्रीवीरप्रभु का पीढ़ा हस्ति शीर्ष नगर में आगमन तथा पर्वदा राजा सुवाहुकुमार का वादने को जाना ।	८९
सुवाहुकुमार का माता पिता से दीक्षा की अनुज्ञा मांगना ।	९२
सुवाहुकुमार का अपने माता पिता के साथ दीक्षा के विषय में प्रश्नोत्तर ।	९५
सुवाहुकुमार को एक दिन का राज्य देना	१०३
सुवाहुकुमार के दीक्षामहोत्सव का वर्णन ।	१०५
सुवाहुकुमार के दीक्षा ग्रहण करने का वर्णन ।	११८
सुवाहु अण्णगर के ग्यारह अंग पढने का तपस्या करने का देवलोक गमनकरने का एव ७ देव का ८ मनुष्य का भव कर के मोक्षजाने का वर्णन ।	१२०



श्रीवीतरागाय नमः

सुख-विपाक-सूत्रम्

(हिन्दी-भावार्थसहितम्)

मूलम्— तेरां कालेणं तेरां समणं रायगिहे रागरे
गुणसीले चेहए होत्था । वण्णओ— ॥ १ ॥

भावार्थ— इस अवसर्पिणी कालके चौथे आरे में उस समय(जब
कि भगवान् महावीर स्वामी, और वह राजा विद्यमान था) राजगृह नामका
नगर था । उसमें गुणशील नामका चैत्यालय—व्यन्तगायतन था । उसका वर्णन
आगे कहे अनुसार समझ लेना चाहिए ॥ १ ॥

मूलम्— * तेरां कालेणं तेरां समणं समणस्स भग-
वओ महावीरस्स अंतेवासी अज्जसुहम्मं णामं थेरे जातिसं-
पत्ते कुलसंपत्ते वलरूवविणयणाणदंसणचरित्तलाघवसंपत्ते
ओयंसी तेयंसी वच्चंसी जसंसी जियकोहे जियमाणे जियमाए
जियलोहे जियइंदिए जियनिहे जियपरीसहे जीवियासमरण-
भयविप्पमुक्के तवप्पहाणे गुणप्पहाणे एवं करणचरणणि-
ग्गहणिच्छयअज्जवमह्वलाघवखंतिगुत्तिमुत्तिविज्जामंतर्धंभ-
वेयनयनियमसच्चसोयणाणदंसणचरित्तउराले घोरे घोरव्व-
ए घोरतवस्सी घोरवंभचेरवासी उच्छूढसरीरे संखित्तविउल-
तेउलेस्से चउहसपुब्बी चउणाणोवगते, पंचहि अणगारसए-

* ज्ञातासूत्र के सूत्र ४ से प्रारंभ

हिं सद्धिं संपरिवुडे, पुन्वाणुपुन्वि चरमाणे, गामाणुगामं दृह-
ज्जमाणे, सुहंसुहेण विहरमाणे जेणेव रायगिहे णगरे, जेणेव
गुणसीले चेहण तेणामेव उवागच्छह । उवागच्छित्ता अहा-
पडिस्सुवं ओग्गहं ओगिण्हित्ता संजमेसां तवसा अप्पाणं
भावेमाणे विहरति । ॥ २ ॥

भावार्थ—उस आरे के उस समय में, अरण्य भगवान् महावीर के
शिष्य आर्य मुधर्माचार्य, जो कि उत्तम जाति और उत्तम कुलवाले, बल रूप
शरीर की आकृति विनय ज्ञान दर्शन चाग्रि और लाघव—अर्थात् थोड़ी
उपाधि रखनेवाले और तीन गावों के त्याग—सहित थे । उनका मन सदा
उन्नत, शरीर तेजस्वी और वचन बट प्रभावशाली थे । वे यशस्वी, क्रोध
गान माया लोभ को जीतने वाले, पाचों इन्द्रियों को वशमें करने वाले ,
तथा निद्रा और परीपह को जीतने वाले थे । उन्हें न जीते रहने की ला-
लमा थी न मरण का डर । तप ही उनका साध्य या तपके द्वारा प्रदान,
और सयमादि गुणों के द्वारा प्रदान थे । पिण्डशुद्धि आदि तथा मुनिवर्म
(महाव्रत) के अनुष्ठान और विनय में तत्पर थे । आर्जय—निष्कपटता,
मार्दव—निर्भयमानता, लाघव, क्षमा, गुप्ति और मुक्ति— निर्लोभता—से
युक्त थे । विद्या, मंत्र और ब्रह्मचर्य से युक्त, बह—लौकिक और लोको-
त्तर आगम, तथा नय आदि को जानने वाले, अभिप्रह आदि नियमों
को पालने वाले, सन्ध, शौच—द्रव्य से निर्लिप तथा भाव की अपेक्षा
समाचारी—को पालन करने वाले, ज्ञान दर्शन चाग्रि में प्रधान, गग द्वेष प-
गिह आदि को जीतने वाले, घोर व्रतों को पालने वाले, घोर तपस्या करने
वाले, घोर ब्रह्मचर्य पालने वाले, शरीर की शुद्धि आदि न करने वाले, अ-
पनी विस्तृत तेजोलेश्या को सक्षिप्त करने—काम में न लाने—वाले, चौदह
पूर्वों के ज्ञाता, मति श्रुत अवधि और मन पर्याय ज्ञानों से युक्त, पाचसौ शि-
ष्यों से घिरे हुए, एक दूसरे के आगे पीछे चलते-हुए, आनन्द से कमल।

अनेक गावों में विहार करते हुए, उस राजगृह नगर के उसी गुणशील नामक चैत्यालय में पवारे । पधार कर, मुनियों के योग्य स्थान पाकर सयम और तप से आत्म-भावना करते हुए सुख से विहार करने लगे ॥ २ ॥

मूलम्— तते णं रायगिहे नगरे परिसा निग्गया, धम्मो कह्मिओ; परिसा जामेव दिसं पाउब्भूया, तामेव दिसं पडिग्गया । तेणं कालेणं तेणं समणं अज्जसुहम्मस्स अणगांरस्स जेट्ठे अंतेवासी अज्जजंबू णामं अणगारे कासवगोत्ते णं सत्तुस्सेहे, जाव अज्जसुहम्मस्स थेरस्स अदूरमासंते उड्डंजाणू अहोसिरे झाणकोट्टोवगते संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति । तते णं से अज्जजंबू णामं अणगारे जांयसड्ढे जायसंसण जायकोउहल्ले संजातसड्ढे संजातसंसण संजातकोउहल्ले, उप्पन्नसड्ढे उप्पन्नसंसण उप्पन्नकोउहल्ले, समुप्पन्नसड्ढे समुप्पन्नसंसण समुप्पन्नकोउहल्ले उट्टाप उट्टेति ॥ ३ ॥

भावार्थ— इसके अनन्तर, राजगृह नगर से एक जनसमुदाय (परिपत्त) मुधर्मास्वामी की वन्दना करने के लिए आया । मुधर्मास्वामी ने उसे धर्म का उपदेश दिया । वह समुदाय जिस दिशासे— जिस तरफ से आया था, उसी दिशा— उसी तरफ चला गया । उसी काल के उसी समय में आर्य मुधर्माचार्य मुनिराज के सब से बड़े शिष्य, कश्यपगोत्रीय षड्हाथके (यावत) आर्य जम्बूस्वामी नामक स्थविर, मुधर्माचार्य के न बहुत दूर ही बैठे थे न बहुत पास ही, अर्थात् थोड़ी सी दूर बैठे थे, तथा ऊपर की छुटना और नीचा गिर करके— गोदुहासन में ध्यान रूपी कंठ में प्राप्त थे और सयम तथा तप के द्वारा आत्मा का ध्यान करते हुए विचरते थे । इसके बाद स्थविर जम्बूस्वामी को पदार्थों के जानने की इच्छा हुई । क्योंकि उन्हें यह सन्देह हुआ कि भगवान् महावीरने जिस तरह दस अर्गों का उपदेश दिया है, उसी तरह ग्याग्रहं अर्गका उपदेश दिया है, या और किसी प्रकार ? इस

नह उन्हे नगय होने से उन्मुक्ता पेटो हूँ । इन लिप ३ (जन्मुव्यामी) नहा मे उठ गये हूँ ॥ ३ ॥

मूलम— उद्गाण उद्दिता जेणामेव अजसुहम्मे येरे तेणामेव उवागच्छह , उवागच्छिता अजसुहम्मे येरे तिकवृत्तां आयाहिणपयाहिणं करेह , करेहनावंदति नमंसति, वंदिता नमंसिता अजसुहम्मरस येरम्म नन्चासुधे नाहदूरे मुम्मसमाणे णमंसमाणे अभिसुहे पंजलिउहे विणणं पज्जुवासमाणे एवं वयामी— जह गां भंते! समणेणं भगवया महावीरेणं आहगरेण नित्यगरेणं मयंसंबुद्धेणं पुरिसुत्तमेणं पुरिसमीरेणं पुरिसवरपुंडरीणं पुरिसवरगंधहत्थिणं लोगुत्तमेणं लोगनाहेणं लोगहिणं लोगपदेवेणं लोगपज्जोगरेणं अभयदणं मरणदणं चक्रवुदणं मग्गदणं पोहिदणं धम्मदणं धम्मदेमणं धम्मनायगेणं धम्मसारहिणं धम्मवरचाउरंतचक्रवद्विणं अप्पट्टिहववनागादंसणभरेणं विषट्ठउमेणं जिणेणं जावणं तिणेणं नारणं बुद्धेणं घोळणं मुत्तेणं मोयणेणं सच्चरणं सच्चदंमिणं सिवमयलमस्यमणंतमक्खयमव्यायाहमपुणरावत्तिं म्मासयंठाणमुवगतेणं वृहविवागाणं अयमट्टे पन्नत्ते, सुहविवागाणं भंते! समणेणं जाव संपत्तेणं के अट्टे पन्नत्ते ?॥४॥

भावार्थ— उठ करे जहा सुधमाचार्य स्थिति ये कहा गये । जा करके सुधमाचार्य को दक्षिण दिशा में तीन गज प्रदक्षिणा (परिक्रमा)

१ जयमठ उवागच्छह मुमुवावदह से यथेहि कोरे भिण प्रवे म्हां हे, किन्तु इवुवुमट्टां क्तने उ लिप उनहा भिण - प्रयोग स्थि गरा हे । उमे-जन्मु व्यामी से भ्रता उन्प्र हूँ, इन कारण के भ्रता प्रान हूँ । मयवा उन्ह जानने का उन्ह हूँ क्याहि मगय हुमा, मगय इन मग हूँ कि उन्ह उन्मुक्ता हूँ ।

२ जाना से पाठ समाप्त ।

की । प्रदक्षिणा करके स्तुति और नमस्कार किया । स्तुति और नमस्कार करके आर्य सुधर्माचार्य स्थविर से थोड़ी सी दूर पर, सेवा करते हुए और नमस्कार करते हुए साम्हने बैठे । सुनने की इच्छा करके और हाथ जोड़कर विनयपूर्वक इस प्रकार बोले—हे भगवन् ! श्रुत-धर्म की आदि करने वाले अर्थात् आचार आदि सूत्रों के आदि उपदेशक, तीर्थङ्कर, अपने आप ही ज्ञान प्राप्त करने वाले, समस्त पुरुषों में रूपादि अतिशयो की अपेक्षा उत्तम, वीरता आदि गुणों से पुरुषों में सिंह के समान, पुरुषों में पाप आदि से रहित होने से पुण्डरीक— सफेद कमल के समान, पुरुषों में गन्धहस्ती के समान, (जिस तरह गन्धहस्ती की गन्ध से सब हाथी भाग जाते हैं उसी तरह जहां भगवान् जाते, वहां से ईति भीति तथा मिथ्यामतवालों के भाग जाने से भगवान् को गन्धहस्ती की उपमा दी जाती है) लोक में सब से श्रेष्ठ , लोक के नाथ , लोक (छह जीव निकाय) का हित करने वाले, श्रद्धावान् पचेन्द्रिय जीवों को धर्म का उपदेश देने के कारण दीपक के समान, सूर्य के समान लोक में ज्ञान का प्रकाश करने वाले, जीवों को अभयदान देने वाले, नाना आपत्तियों में फँसे हुए जीवों को मोक्ष रूपी शरण देने वाले, श्रुतज्ञान रूपी चक्षुको देने वाले, सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान और सम्प्रवृत्तारित्र रूप मोक्षमार्ग को देने वाले , सम्यक्त्व तथा चारित्र रूपी बोधि को देने वाले, सामायिक आदि चाग्रि-धर्म को देने वाले, श्रुत- चारित्र रूपी धर्म का उपदेश देने वाले, धर्म के नेता, धर्म रथ का चलाने के लिए सारथी के समान, जैसे चक्रवर्ती चारो दिशाओं में विजय पाता है उन्नी तरह, चारोगतियों पर विजय प्राप्त करने वाले, केवल-ज्ञान और दर्शन को वाग्य करने वाले, शठता गहित, राग द्वेष को जीतने वाल, छद्मस्थों को राग द्वेष जिताने वाल, स्वयं तिरने वाले और दूसरों को तारने वाले तावज्ञान प्राप्त करने और कराने वाले, धनादि वाद्य परिग्रह और क्रोधादि अन्तरंग

परिग्रह को छोड़ने वाले, तथा दृग्गमे से दृष्टाने वाले, सर्वत्र आरंभ सर्वदर्शा, कल्याण स्वल्प अचल नागैग प्रन्तगतिन चाया गतिन जिममे फिर नहा लौटने ऐसे नित्यस्थान (मोक्ष) को प्राप्त होने वाले, श्रमण भगवान् महा-वीरने दुःखविपाक का अर्थ कहा है, किन्तु हे प्रज्व ! उन श्रमणभगवान् ने मोक्ष को जाने हुए सुग विपाक का क्या अर्थ कहा है ? ॥ ४ ॥

मूलम्—तते णं से सुहम्ममे अणगारं जंवरुअणगारं एवं वयासी—एवं खलु जंवरु ! समणेणं जाव संपत्तेणं सुहविवा-गाणं दस अज्जयणा पणत्ता । तं जहा—सुवाहु १ भदन्दी २ सुजायण ३ सुवासवे ४ तहंवरु जिणदामे ५ धणपती य ६ महवलो ७ भदन्दी ८ महचंदे ९ वरदत्ते १० ॥ ५ ॥

भावार्थ— जम्बू स्वामी का प्रश्न सुनकर सुवर्मान्वामी अन-गाव बोले—तं वच्च ! [यावत्] मुक्ति को प्राप्त हुए श्रमण भगवान् महा-वीरने सुखविपाक के दश अध्ययन कताए हैं । वे इन प्रकार हैं— १ सु-वाहु २ भदन्दी ३ सुजाय ४ सुवासव ५ जिनदाम ६ वनपति ७ महा-वल ८ भदन्दी ९ महचन्द्र तथा १० वरदत्त ॥ ५ ॥

मूलम्—जह णं भंते ! समणेणं जाव संपत्तेणं सुहविवा-गाणं दस अज्जयणा पणत्ता , पढमस्स गां भंते ! अज्जय-णास्स सुहविवागाणं समणेणं जाव संपत्तेणं के घट्टे पणत्ते ? ॥ ६ ॥

भावार्थ—[जम्बू स्वामी बोले] भगवान् ! [यावत्] मुक्ति को प्राप्त हुए भगवान् ने सुखविपाक के दश अध्ययन कते हैं । किन्तु हे भगवन ! उन मुक्ति को प्राप्त हुए भगवान् ने उनमें में, पहिले अध्ययन में क्या कताया है ? ॥ ६ ॥

मूलम्—तते णं से सुहम्ममे अणगारं जंवरुअणगारं एवं वयासी—एवं खलु जंवरु ! तेणं कालेणं तेणं समणं हत्थिसीसे

णामं णगरे होत्था । रिद्धत्थिमियसमिद्धे, पमुइयजणजाणवए,
 आइण्णजणमाणुस्से , हलसयसहससंसकिट्टविकिट्टलट्टपण्ण-
 त्तसेउसीमे, कुक्कुडसंडेयगामपउरे, उच्छुजवसालिकलिए,
 गोमहिसगवेलगप्पभूते, आयारवंतचेइयजुवइविविधसंणि-
 विट्टबहुले, उक्कोडियगायगंठिभेदयभडतक्करखंडरक्खर-
 हिए, खेमे, णिरुवद्दवे, सुभिवखे, वीसत्थसुहावासे, अणेग-
 कोडीकोडुंबियाइण्णणिब्बुयसुहे, णडणट्टगजल्लमल्लमुट्टिय-
 वेलंबगकहगपवगलासगआइक्खगलंखमंखत्तृणइल्लतुंववी-
 णियअणेगतालाघराणुचरिए , आरामुज्जाणअगडतलाग-
 दीहियवप्पिणिगुणोववेण नंदणवणप्पगासे उव्विद्धविडलंगं-
 भीरखातफलिहे , चक्कगयमुसुंढिओरोहसयग्घीजमलक-
 वाडघणट्टुप्पवेसे, धणुकुडिलवंकपागारपरिक्खित्ते, कविसी-
 सयवट्टरइयसंठियविरायमाणे, अट्टालघचरियदारगोपुरतोर-
 णउण्णयसुविभत्तरायमग्गे , छेयायरियदढफलिहइंदकीले,
 विवणिवणिच्छेत्तसिप्पियाइण्णणिब्बुयसुहे, सिघाडगनि-
 गचउक्कचच्चरपणियावणविविहवत्थुपरिमंडिए, सुरम्मे, णर-
 बहपविइण्णमहिवइपहे, अणेगवरतुरगमत्तकुंजररहपहकर-
 सीयसंदमाणीआइण्णजाणजुग्गे विमडलणवणालिणिसो-
 भियजले, पंडुरवरभवणसण्णिमहिए, उत्ताणणयणापेच्छ-
 णिज्जे, पासादीए, दरिसणिज्जे, अभिरूवे पडिरूवे । तस्स णं
 हत्थिसीसस्स णयरस्स वहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभागे
 एत्थ णं पुप्फकरंडे णामं उज्जाणे होत्था । सव्वोउयपुप्फ-
 फलसमिद्धे, रम्मे, नंदणवणप्पगासे पासाईए दरिसणिज्जे
 अभिरूवे, पडिरूवे, तत्थ णां कयवणमालपियस्स जक्खस्स
 जक्खायतणे होत्था ॥ ७ ॥

भावार्थ— जल्द स्वामी के पृष्ठ पर) सुवर्णाचार्य जन्मस्वामीसे
 उस प्रकार करने लगे ह जन्म ! उस अयसर्पिणी के चौथे आंग के उस
 समय में इन्दिरीय नाम का नगर था । वह नगर, अनेक भयनों में भूषि-
 त, मय रहित तथा वन गन्धर्वि में भग्ना था । वहाँ के रहने वाले लोग
 मदा प्रमत्त रहते थे । वह जन-समूह में मग था । किसानों ने लाखों
 हलों में अधिक सीसा वाली टूट तथा पाम का- सब जगह की- जमीन की
 जोतकर बीज बोने योग्य बना लिया था । उस नगर में माट और मुर्गी
 के पालने वालों के बहुत से शौले रहते थे । वहाँ टैंग जी चावल आदि
 बनाजों की र्मा न थी । वृत्तमी गाण भैंमें और भैंमें थीं । वहाँ सुन्दर र
 चैत्यालय और वेद्याओंके मुहृटे भी बहुत थे । किन्तु उन नगरमें लाच
 (धूस)लेने वालों उचरको लुटेरों चोंगे चुंगीवाधे का और गजका उपद्रव
 नहीं था । किर्माका बुग नहीं होता था । भिक्षुकोंको भिक्षु वर्ती सुगमता
 से मिलती थी । इसलिए वहाँ विधानपात्र और निर्मय लोगोंका शुभ नि-
 वाम था । अनेक प्रकारके समान समूह कुटुम्बियों और मन्नुट लोगोंमें
 भग था; इसलिए सुखरूप था । वहाँ नाटक करने वाले, नाच करनेवाले,
 गजाकी स्तुति करनेवाले (चागर) मट, विद्वेषक, कथा कहने वाले,
 नैगर, भाड, ज्योतिषी, अथवा स्वप्न-शास्त्र आदि जाननेवाले, वाम पर
 खेलने वाले, चित्र दिखाकर भिक्षा मागने वाले, नृण-णक प्रकार का
 वाजा— बजाने वाले, चीगा बजाने वाले नाली बजाकर नाचने वाले—
 इत्यादि लोग रहते थे । फलमर्दी धर्म वर्गांचे, कुआ, तालाव, जावड़ी
 और उपजाऊ खेतों से युक्त और नन्दन वन के समान शोभमान था ।
 ऊची चौड़ी और गहरी खाई थी, जो कि ऊपर चौटी और नीचे सकरटी
 थी । चक्र, गदा मुमुर्गी अवरगेव (बीच का कोट) तथा सैंकड़ों आदमियों
 को नाश करने वाली ऊपर लगार्ड हुई महाशिलास्य शक्ती (चैलन)
 तथा छिद्र रहित किर्माओं के कारण उस में धुसता बड़ा कठिन था । टेढ़े

धनुष से भी ज्यादा टेढ़े परकोटे से घिरा हुआ था । अनेक सुन्दर २ फंगुरों से मनोहर था । ऊची अटारियों, परकोटा के भीतर के आठ हाथ के मार्ग, ऊंचे २ परकोटा के द्वारों गोपुरों तोरणों और चौड़ी चौड़ी सड़कों से युक्त था । चतुर शिल्पकारों द्वारा बनाए हुए आगल और इन्द्रकील (नगर द्वार का एक भाग) से युक्त था । बाजार और वणिकों के बहुत स्थान थे । कुंभार आदि से वहा के निवासियों को बड़ा आराम रहता था । तिरस्तों चौरस्तों चत्वरों (बहुतरास्तों का संगम स्थान) और नाना तरह के वर्तन आदि के बाजारों से शोभित था । अति रमणीय था । वहां का राजा इतना प्रभावशाली था कि उसने अन्य समस्त राजाओं के तेजको फीका करदिया था । अनेक अच्छे अच्छे घोड़ों, मस्त हाथियों, रथों, गुमटी वाली पालखियों, स्यन्दमान (पुरुष प्रमाण पालखी) गाड़ी आदि और युग्यों (एक प्रकार की सवारी) से युक्त था । उस नगर के अलाशय, नवीन कमल कमलिनियों से शोभित थे । वह नगर चन्द्रमा जैसे स्वच्छ उत्तम उत्तम महलों से युक्त था । वह इतना म्वच्छ था कि विना पलक मोरे (एक टक) देखने को जी चाहता था । देखते ही चित्त प्रसन्न हो जाता और आखों को आराम मिलता था । बड़ा ही मनोज्ञ था । देखने वालों को उसका जुदा २ ही रूप मालूम होता था ।

इसी हस्तिशीर्ष नामक नगर के बाहर ईशान कोण में पुष्पकरण्डक नाम का उद्यान था । वह सर्व ऋतुओं के फूल और फलों से सम्पन्न था । नन्दन वन की तरह रमणीय था । देखते ही चित्त को प्रसन्न कर देता और आखों को बड़ा आनन्द आता था । बड़ा ही मनोज्ञ था । देखने वालों को जुदा जुदा ही रूप दिखाई देता था । इसी उद्यान में कयवण-मालपिण (कृतवनमालप्रिण) नाम के एक यक्ष का यक्षायतन था ॥७॥

मूलम्— चिराइए, पुब्बपुरिसपणत्ते, पोराणे, सदि-

ए, वित्तिए, णाए, सच्छत्ते, सज्झए, सघंटे, सपडागे, पडागाइपडागमंडिए, सलोमहत्थे, कयवेपहिण, लाउ-
 त्तलोहयमहिण, गोसीससरमरत्तचंदणदहरदिण्णपंचंगुलि-
 त्तले, उवचियचंदणकलसे, चंदणाघडसुकयतोरणापडिदु-
 वारदेसभाए, आसत्तोसत्तविउलवट्ठवगघारियमल्लदामक-
 लावे, पंचवण्णसरससुरहिंसुककपुप्फपुंजांवयारकलिए, कालागुरुपवरकुंदुक्कतुक्कध्वमधमघंनगंधुद्धयाभिरामे,
 सुगंधवरगंधगंधिए, गंधवट्ठिभूए, णडणट्टगजल्लमल्लमुट्ठिय-
 वेसंथयपबगकहगलासगआइक्खगलंखमंखतृणइल्लतुंयवि-
 णियभुयगमागहपरिगए, बहुजणजाणवयस्स विस्सुयकित्तिए,
 बहुजणस्स आहुरस्स आहुणिज्जे, पाहुणिज्जे, अच्चणिज्जे
 बंदणिज्जे, नमंसणिज्जे, प्यणिज्जे, सक्कार-
 णिज्जे, सम्माणणिज्जे, कल्लाणं मंगलं देवयं चेइयं विण-
 णां पज्जुवासणिज्जे, दिव्वे सच्चे सच्चोवाए, सण्णिहिय-
 पाडिहेरे जागसहस्सभागपडिच्छए, बहुजणो अच्चेइ
 आगम्म पुप्फकरंडवेइयं कयवणामालपियस्स जक्खस्स जक्खा-
 यत्तणं ॥ ८ ॥

भावार्थ—इह यक्षायतन, प्राचीन कालीन पूर्व पुरुषों द्वारा सन्म-
 नित, पुगना, प्रसिद्ध, आराधन करने वालों को जीविता देने वाला,
 न्याय का निर्णय करने वाला, घटा सहित, व्यजा और व्यजा के ऊपर की
 ध्वजाओं से मंडित और रोम की पूंजणों से युक्त था। उसमें वेदी बनी
 हुई थी। गोवर से लीया हुआ था। खडिया मिट्टी से पोना हुआ था
 वहा ताजे विसे हुए मलयागिर और लाल चदन से पाच अंगुलियों का
 हाथ (थापा) घनाया-हुआ था। चैत्यालय के बाहर मागलिक घट बने हुए
 थे। अच्छे २ तोरण हरएक द्वार पर बधे हुए थे। वहा भूमि को और

ऊपरी भाग को छूती हुई, विपुल विस्तार वाली गोल और लम्बी २ मालाए थीं । पाचों रंगों के फूलों से युक्त था । महकती हुई अगर आदि की सुगंध से सुगंधित, तथा चीड़ और लोबान आदि उत्तमोत्तम गंध वाले द्रव्यों से युक्त था । बहुत सुगंध वाला होनेमें ऐसा मान्य होता था, जैसे गंध-द्रव्य की गोली हो । वहाँ नट, नाचने वाले, रस्सों पर खेल करने वाले, मल्ल, मुष्टि युद्ध करने वाले, विदूषक, तैराक, कथक, रास को गाने वाले, शुभाशुभ को कहने वाले, ऊँचे वास पर खेलने वाले, चित्र दिखाकर भिक्षा मागने वाले, तृण और वीणा बजाने वाले भोजक और भाट आदि लोगों से युक्त था । बहुत नगर निवासियों में उसकी कीर्ति प्रसिद्ध थी । अनेक लोग मन्त्रोच्चारण करके वहाँ आहुति देते और आराधन करते थे । चन्दन गन्ध आदि से, स्तुति से, नमस्कार से, फूलों से और वस्त्रों से पूजनीय था । इष्टसिद्धि, अनिष्टके निवारण के लिए, देव तथा देव की प्रतिमा प्रधानरूप में सेवन करने योग्य है ऐसा समझ कर पूजनीय था । सत्य-आदेश करने से सत्य, और सत्य प्रभाव-महिमा वाला था । अधिष्टायक देवों ने उसकी महिमा बढ़ा रखी थी । हजारों यज्ञों का भाग उसे प्राप्त होता था । उसमें बहुत लोग आकर पूजा करते थे । इस प्रकार का पुष्पकरण्डक चैत्य कृतयनमालप्रिय नाम के यक्ष का यक्षायतन था ॥८॥

मूलम्— से गां पुष्पकरण्डे चेद्दए कयवणमालपियस्स जक्खस्स जक्खायतणे एक्केणं महया वणसंडेणं सव्वओ समंनं संपरिक्खत्ते, से णं वणसंडे किण्हे किण्हांभासे नीले नीलोभासे हरिए हरिओभासे सीए सीओभासे णिद्धे णिद्धो भासे तिब्बे तिब्बांभासे किण्हे किण्हच्छाए नीले नीलच्छाए हरिए हरियच्छाए सीए सीयच्छाए णिद्धे णिद्धच्छाए तिब्बे तिब्बच्छाए घणकडिअकडिच्छाए रभमे महामेहणिकुरंभभूए ॥ ९ ॥

भावार्थ— पुष्पकरण्ड उद्यान में, वह कृतवनमालप्रिय नामक यक्ष का यक्षापतन, एक बड़े वनखण्ड (अनेक जाति के वृक्षों के समूह को वन-खण्ड-कहते हैं)से चारों तरफ विरा हुआ था। वह वनखण्ड कहीं काला और कालीप्रभा वाला था, कहीं नीला और नीली प्रभावाला था, कहीं हरा और हरी प्रभा वाला था। किसी जगह शीतल और शीतल-प्रभ था। किसी स्थान पर स्निग्ध और स्निग्धप्रभ था। तीव्र-वर्ण और तीव्र प्रभा वाला था। किसी जगह वह कृष्ण होने से कृष्ण छाया वाला था। किसी जगह मोर के गले की तरह नीला होने से नील छाया वाला था। अन्यत्र तोते के पंख के समान हरा था, अतएव हरी छाया वाला था। कहीं शीत था, अत शीत छाया वाला था। कहीं स्निग्ध था, अतएव स्निग्ध छाया वाला था। कहीं तीव्र वर्ण था, अत तीव्र छाया वाला था। वह शाखा प्रशाखाओं सहित था, इसलिए-वहा सदा छाया रहा करती थी। वह पेसा मालूम होता था, जैसे बड़े र वादलों का समूह हो ॥ ६ ॥

मूलम्— ते सां पायवा मूलमंतो कंदमंतो खंधमंतो तयामंतो सालमंतो पवालमंतो पत्तमंतो पुष्पमंतो फलमंतो धीयमंतो अणुपुत्रवसुजायकृद्वलवट्टभावपरिणया एकखंधा अणेगसाला अणेगसाहृप्पसाहविडिमा अणेगनरवामसुप्प-सारिअअग्गेज्झघणविउलवहरखंधो अच्छिद्वपत्ता अविरल-पत्ता अवाईणपत्ता अणईद्वपत्ता निद्वूयजरदंपंडुपत्ता णवह-रियभिसंनपत्तभारंधकारगंभीरदरिसणिज्जा उवणिग्गयणव-

१ वाचनान्तर में-- पाईणपडीणायथसाला उदीणदाहिणवित्थि-
रणा अणायनय रणय विप्पहाइयओलवपलवलवसाहप्यसाहविडिमा
अवाईणपत्ता अणुईण पत्ता—इतना पाठ अधिक है।

अर्थ— उनकी शाखाए पूर्व और पश्चिम म लम्बी उत्तर और दक्षिण दिशा में चौड़ी थीं, अयोमुख होकर नीचे की ओर की हुई थीं। कोई भुक्तनीं जा रही थीं। फैली हुई थीं तथा नीचे की ओर खूब लम्बी चली गई थीं।

तरुणपत्तपल्लवकोमलउज्ज्वलचलंतकिसलयसुकुमालपवाल -
 सोहियवरंकुरगगसिहरा णिच्चं कुसुमिया णिच्चं माइया
 णिच्चं लवइया णिच्चं थवइया णिच्चं गुलइया णिच्चं गो-
 च्छिया णिच्चं जमलिया णिच्चं जुवलिया णिच्चं विणमिया
 णिच्चं पणमिया णिच्चं कुसुमियमाइयलवइयथवइयगुलइयगो-
 च्छियजमलियजुवलियविणमियपणमियसुविभत्तपिंडमंजरि-
 वडिसयधरा, सुयवरहिणमयणसालकोइलकोहंगकभिंजारक-
 कोंडलकजीवंजीवकण्दीमुहकविलपिंगलफखकारंडचक्कवाय-
 कलहंससारसअणेगसउणगणमिहुणविरइयसहुणगइयमहुर-
 सरणाइए, सुरम्मे, संपंडियदरियभमरमहुकरिपहकरपरिलि-
 न्तमत्तछप्पयकुसुमासवलोलमहुरगुमगुमंतगुंजंतदेसभागे, अ-
 व्भंतरपुप्फफले बाहिरपत्तोच्छण्णे पत्तेहि य पुप्फेहिय उच्छ-
 राणपडिबलिच्छण्णे साउफले निरोयए अकंटए गाणाविह-
 गुच्छगुम्ममंडवगरम्मसोहिए विचित्तसुहकेउभूए वावीपुक्ख-
 रिणीदीहियासु य सुनिवेसियरम्मजालहरए पिडिमणीहारि-
 मसुगंधिसुहसुरभिमणहरं च महया गंधद्वणिं सुयंता गा-
 णाविह गुच्छगुम्ममंडवकवरकसुहसेउकेउबहुला अणेगरह-
 जाणजुगसिबिधपविमोयणा सुरम्मा पासादीया दरिसणिज्जा
 अभिरूवा पडिरूवा ॥ १० ॥

भावार्थ— उस वनखण्डके वृक्षोंमें उत्तम जड़ें कर तने छाल
 शाखाए अंकुर पत्ते फूल फल और बीज थे । वे गोल गोल वृक्ष, क्रम से
 लगे हुए बड़े मनोहर मालूम होते थे । उनमें एक ही एक स्कन्ध और अनेक
 शाखाए और प्रशाखाए थीं । अनेक मनुष्यों के वाँह फैलाने पर भी उनका
 तना वाम (वाँहों) में नहीं आसकता था । उन वृक्षों के पत्तों में छेदन थे,
 तथा वे खूब घने थे, नीचे झुके हुए थे, वे ईति रहित थे । उनमें पुराने

और पीले पत्ते नशा ये । नर्मान और हरे हरे पत्तों के समुदाय के अन्ध-कार से गभीर दीखते थे । निकले हुए चचल नवीन २ पत्तों से, नरम नरम और उज्वल विशलया से तथा सुन्दर कोपलों से उनके अक्षुर और अप्रभाग शोभायमान थे । हमेशा फूले रहते-थे । हमेशा और —और— वाले रहते थे । सदा पत्तों वाले रहते थे । सदा भ्रूमके वाले रहते थे । सदा गुल्म वाले रहते थे । सदा गुच्छे वाले रहते थे । सदा एक ही श्रेणी में रहते थे । सदा दो दो साथ रहते थे । सदा फल फूलों से नमै हुए रहते थे । कोंट सदा नमते जा रहे-थे । इसलिए वे वृक्ष मन्दा फूले रहते, और युक्त रहते, पल्लवित रहते, भ्रूमके वाले रहते, गुच्छे वाले रहते, श्रेणीबद्ध रहते, दो दो साथ में रहते, फला के भाग से नमै रहते और कोंट नमते जा रहे थे । तथा अच्छड़ी तरह उज्वल हुए गुच्छे और मञ्जरी रूपी शिखर को धारण करने वाले वृक्ष उन वनखण्ड में थे । उन वनखण्ड में तोता मेना मोग कोयल कोहंगक (कोभगक) भिगार कौटलक चक्रोर नन्दीमुख कपिल पिगलाक्ष तारुड चक्रवाक (त्रकत्रा) कलहस्त मागस आदि अनेक पक्षियों के जोड़ा के द्वाग मयुर शद और आन्ध्रप दुष्का कात्ता था । वह अतिशय रमणीय था । वहा मरोन्मत्त भ्रम और भ्रमणियों के समूह के समूह इकट्ठे रहते थे । और दूसरी दूनरी जगहों में आने वाले फूलों के रस के लोभी भोरे उस प्रदेश में 'गुन गुन' शब्द (गूज) किया करते थे । उन वनखण्ड के वृक्षों के अन्दर फल फूल थे और बाहर पत्तों से ढके हुए रहते थे । वे वृक्ष पत्तों और फूलों से विशुद्ध टके रहते थे । उनके फल बड़े मीठ नीरोग और कांटों से रहित थे । नाना प्रकार के गुच्छों (बेल आदि के) गुल्मों (मालती आदि-लताओं) और लता-मण्डपों से रमणीय थे । वहा (वनखण्ड में) जगह-जगह मणालिक ध्वजाएँ थीं । वहा चावड़ी (चौकोर) पुष्करिणी और दीर्घिकाओं पर-भूगोखे वाले मकान बने हुए थे । बहुत दूर तक फैलने वाली शुभ गन्ध को छोड़ने वाले अनेक वृक्ष थे । उनके अने-

क गुच्छ गुल्म और मृत्प-गृह थे । उनके नीचे, थाले— वयारिया और ऊपर ध्रुजाए थीं । वहा अनेक रय गाडी पालखी आदि सवारिया गकखी जा सकती थीं । बड़े रमणीय थे । देखते ही चित्त प्रसन्न हो जाता था । दर्शनीय और मनोहर थे । देखने वालों को उनका जुदा जुदा सा हीरूप दीखता था ॥ १० ॥

मूलम्— तस्स णं वणसंडस्स वहुमज्झदेसभागे एत्थ गां महं एक्के असोगवरपायवे पण्णत्ते , कुसविकुसविसुद्धरु-
कखमूले मूलमंते कंदमंते जाव पविमोयणे सुरम्मे पासा-
दीए दरिसण्णिज्जे अभिरूवे पडिहंवे ॥ ११ ॥

भावार्थ—उम वनखण्ड के बीचोंबीच एक उत्तम अशोकवृक्ष था । उसके आसपास से दूक घास और अन्याना झाड़िया निकाल दी गई थीं । वह जड़ वाला था, कन्द (जड़ से ऊपर और तने से नीचे के भाग) वाला था, (यावत्) उसके नीचे रय आदि गकखे जा सकते थे । वह बड़ा रमणीय था । उमे देखते ही चित्त प्रसन्न हो जाता था । देखने से आखों को कुछ भी कष्ट नहीं होता था । अत्यन्त मनोहर था । देखने वालों को उसका रूप नया और जुदा जुदा ही दिखाई देता था ॥ ११ ॥

१ वाचनान्तर— दूरोवगयकन्दमूलवट्टलट्टसठियसिलिट्टघणमसिण-
णिद्धसुजायनिरुवहउच्चिद्धपवरखधी, अणोणनरपवरभुयागेजभो, कुसुम-
भरसमोनमन्तपत्तलविसालसालो, महुकरिभमरगणगुमगुमाइयनिलितउ-
ट्टितसस्तिरीए, णाणासउणगणमिहुणसुमहुर करणसुहपलत्तसइमहुरे ॥

अर्थ—उस अशोकवृक्ष की जड़ धरती में धुमी थीं । उसका तना गोल मनोत्र सुन्दर आकार वाला मीधा मोटा नरम चिन्ना विकार रहित, खूब ऊंचा और उत्तम था । अनेक मनुष्यों की लम्बी लम्बी बाहों में भी नहीं आता था । उसकी टालिया फूलों के बोझ से झुकी हुई, पत्ते वाली और बड़ी थी । उस पर भ्रमरी और भ्रमर 'गुनगुन' शब्द करते हुए बैठे थे और कोई २ उड़ रह थे, इससे उसकी शोभा बढ़ गई थी । इनके मिवाय नाना तरह के पक्षियों के जोड़ों की कानों-की आनन्द देने वाली मधुर चञ्चलहाट से बह और भी मनोमग्न जान पड़ता था ।

मूलम्—से णं असोगवरपायवे अरण्येहिं वृहृहिं तिलएहिं लउएहिं छतोवेहिं सिरोसेहिं सप्तवण्णेहिं दहिवरण्येहिं लोद्रेहिं धवेहिं चंद्रणेहिं अज्जुणेहिं णीवेहिं कुडएहिं सच्च्वेहिं फणसेहिं दाडिमेहिं सालेहिं तालेहिं तमालेहिं पियएहिं पियंगूहिं पुरोवगेहिं रायरुक्खेहिं णंदिरुक्खेहिं सब्बओ समंता संपरिकिखत्ते, ते णं तिलया लवइया जाव णंदिरुक्खा कुसविकुसविमुद्धरुक्खमूला मूलमंनो कंदमंतो एएसिं वण्णओ भणियच्चो, जाव सिवियपविमोयणा सुरम्मा पासादीया दरिसणिज्जा अभिरुक्खा पडिरुक्खा, ते णं तिलया जाव णंदिरुक्खा अण्णाहिं वृहृहिं पउमलयाहिं णागलयाहिं असोयलयाहिं चंपगलयाहिं चूपलयाहिं वणलयाहिं वासंतियलयाहिं अइमुत्तयलयाहिं कुंदलयाहिं सामलयाहिं सब्बओ समंता संपरिकिखत्ता, ताओ णं पउमलयाओ णिच्चं कुसुमियाओ जाव वडिसयधराओ पासादीयाओ दरिसणिज्जाओ अभिरुक्खाओ पडिरुक्खाओ ॥ १२ ॥

भावार्थ—यह अशोक वृक्ष बहुत से तिलक लीची-वड़हर शिरीष सप्तपर्ण (सात सात पत्तों के गुच्छे वाला वृक्ष) दधिपर्ण लोध्र धव चन्दन अर्जुन कदम्ब कुटज (कूडा) सत्र्य पनस दाडिम शाल ताड़ श्यामतमाल प्रियक फूलफेन पुरोवग खिरनी (रायण) और नन्दि वृक्षों से, सब तरफ से सब जगह विंग हुआ था। उन तिलक वड़हर आदि से लेकर नन्दि वृक्ष पर्यन्त सब वृक्षों की जड़ें भी घास तथा अन्यान्य माड़ियों से रहित थीं। उनकी जड़ें धरती में तिछीं चली गई थीं। वे वृक्ष उत्तम कन्द वाले थे।

१ वाचनान्तर में इतना पाठ अधिक है—तस्स णं असोगवरपायवस्स उयरि बह्वे अट्टमंगलगा पन्नत्ता ।

अर्थ— उस अशोक वृक्ष के ऊपर बहुत से पाठ पाठ धावत्स आदि मार्गलिक थे ।

इसके सिवाय पहले वर्णन की हुई सब बातें उन वृक्षों में समझना चाहिए। (यावत्) वहा भी पालखी वगैरह वस्तुएं रखी जा सकती थीं (क्योंकि वे वृक्ष भी बहुत लम्बे चौड़े थे)। वे बहुत ही रमणीय थे। चित्त को प्रसन्न करने वाले थे। दर्शनीय थे। मनोहर थे। देखने वालों को उनके जुदे जुदे ही रूप दिखाई देते थे। तथा वे (तिलक आदि वृक्ष) अनेक पद्मलताओं से नागलताओं से अशोक लताओं से चपक लताओं से आमलताओं से वन लताओं से वासती लताओं से अतिमुक्तक लताओं से कुंद लताओं से और श्याम लताओं से चारों तरफ घिरे हुए थे। वे लताएं सदा फूली रहती थीं। शिखर को धारण करने वाली और चित्तको प्रसन्न करने वाली थीं। हर्ष को पैदा करती और मनोहर थीं। दर्शकों को उनका रूप अलग २ ही दीखता था ॥ १२ ॥

मूलम्— तस्स णं असोगवरपायवस्स हेट्ठा ईसि खंध-
समल्लीणे एत्थ णं महं एक्के पुढविसिलापट्टए पणणत्ते, विक्खं-
भायामउस्सेहसुप्पमाणे किण्हे अंजणघणक्किवाणकुवलयह-
लधरकोसेज्जागासकेसरुज्जलंगीखंजणसिगभेदरिट्ठयजम्बूफल-
असणकसणधंधणणीलुप्पलपत्तनिकरअयसिकुसुमप्पगासे
मरकतमसारकलित्तणघणकीयरासिवण्णे णिद्धघणे अट्टसिरे
आयंसयतलोवमे सुरम्मे ईहामियउसभतुरगनरमगरविहग-
वालगकिण्णररुरुसरभचमरकुंजरवणालयपउमलयभत्तिचित्ते
आइरणगरुधवूरणवणीततूलफरिसे सोहासणसंठिए पासा-
दीए दरिसण्णिजे अभिरुवे पडिरुवे। तत्थ णं हत्थिसीसे
णगरे अदीणत्तत्तू नामं राया होत्था ॥१३॥

भावार्थ— उस उत्तम अशोक क्ष के नीचे, तने के पास एक बड़ी पत्थर की शिला थी। वह उचित प्रमाण में चौड़ी लम्बी और ऊंची थी। उसका प्रकाश अंजनक (वनस्पति विशेष) मेघ, तलवार, नीले कमल,

बलदेव के बछ, आसमान, शिर्ष के बाल, काजल की कोठरी, गजन (पहिण का काँठ) मींग, अगिष्ट (गहन विशेष) जामुन के फल, बीजरु वृक्ष, सन के फल, नील कमल के चों के समूह और अलसी के फल के समान नीला, तथा उमका वर्ण इन्द्रनील मणि, कनौठी, चमडे के कमपटे और आखों की पुतली के समान काला था। वह बहुत चिकनी, आठ कोने वाली और दर्पण के समान चमकीली थी। बड़ी रमणीय थी। उस पर भेड़िया बिल घोडा मनुष्य मगर पक्षी सर्प किलर मृग अश्रापद चमरीगाय हाथी बनलता और पन्नरना आदि के चित्र बने हुए थे। उसका स्पर्श कमाये हुए चमड़े की तरह, रुई का तरह, बृग नामक वनस्पति की तरह, मखन की तरह और आरु की रुई की तरह कोमल था। मिहासन सरीसा आकार था। बड़ी मुन्द्र, दर्शनीय, और मनोहर— इतनी मनोहर कि देखने वालों को जुड़े जुड़े रूप वाली दीव्यता थी।

उस हस्तिशीर्ष नामक नगर म अर्दानशत्रु नामका राजा था ॥ १३ ॥

मूलम्—महया हिमवंतमहंनमलयमंदरमहिदसारे अचं-
नविमुद्धदीहरायकुलवंससुप्पन्नं गिरंतरं रायलवखणचिरा-
इअंगमंगे बहुजणवहुमाणे पूजिए सव्वगुणसमिद्धे खत्तिए
मुहए मुद्धाहिसित्ते माउपिउसुजाण द्यपत्ते सीमंकरे सीमं-
धरे खेमंकरे खेमंधरे मणुस्सिद्धे जणवयपिया जणवयपाले जणव-
यपुरोहिण सेउकरे केउकरे णारपवरे पुरिसवरे पुरिससीहे पुरि-
सवग्गे पुरिसामीविसे पुरिसपुंडरीए पुरिसवरगंधहत्थी अड्ढे
दित्ते वित्ते विच्छिण्णविउलभवणसयणासणजाणवाहणाहण्णे
बहुधणवहुजायस्वरयत्ते आओगपओगसंपउत्ते विच्छद्धिअ-
पउरभत्तपाणे बहुदासीदासगोमहिसगवेलगप्पभूत्ते पडिपुण्ण-
जंतकोसकोट्टागाराउधामारे बलवं दुव्वलपच्चामित्ते ओहय-
कंदयं निहयकंदयं मलिअकंदयं उद्धियकंदयं अकंदयं ओह-

यमंतुं निहयसंतुं मलिघसंतुं उद्विअसंतुं निज्जिघसंतुं परा-
इअसंतुं ववगयदुब्भिकखं मारिभयविप्पमुक्कं खेमं सिवं
सुभिकख पसंतडिबडमरं रज्जं पसासेमाणे विहरइ ॥ १४ ॥

भावार्थ— वह राजा महाहिमवान् पर्वत की तरह, तथा मलय, मेरु और महेन्द्र पर्वतकी तरह प्रगल्भ था। सर्वथा निर्दोष और प्राचीन राज-
वंश में पैदा हुआ था। उसका शरीर साश्विया आदि राजलक्षणों से सर्वत्र
शोभित था। अनेक जनसमूहों से सन्माननीय और पूज्य था। सर्व गुण
सम्पन्न था। क्षत्रिय था। सदा खुश रहता था और निर्दोष माता से उत्पन्न
हुआ था। उसके बाप दादाओं ने उस का राज्य अभिषेक किया था।
माता पिताकी विनय करने वाला (सत्पुत्र) था। दयालु था। सीमा
(कानून आदि की मर्यादा) बनाने वाला, और अपने बनाए हुए नियमों
को स्वयं पालने वाला था। क्षेम (निरुद्वेगता) करने वाला और स्वयं
क्षेम रूप था। मनुष्यों का स्वामी था। प्रजा को पिना समान था, क्योंकि
उसकी रक्षा करता था। प्रजा को पुरोहित मगीखा था, क्योंकि शान्ति
करने वाला था। सन्मार्गको बताने वाला था। अद्भुत कार्य करने वाला था।
श्रेष्ठ मनुष्यों वाला था और वह स्वयं मनुष्यों में उत्तम था। अपराधियों
को दण्ड देने में क्रूर होने से वह पुरुषों में सिंह के समान था। शत्रुओं को
भयकारी होने से पुरुषों में व्याघ्र के समान था। पुरुषों में पुडरीक (सफे-
द कमल) के समान था। क्योंकि मुख चाहने वालों के द्वारा सेवनीय था
पुरुषों में गन्धहरती के समान था। क्योंकि शत्रु राजा रूपी हाथी उसका
साम्हना नहीं कर सकते थे। सत्र तरह में सम्पन्न था। आत्म-गौरव
वाला था। विनय आदि गुणों में प्रसिद्ध था। उसके भवन, शयन (सेज)
आसन यान वाहन आदि बहुत थे। अथवा उसके विजाल भवन, शयन आसन
यान(गथ आदि) वाहन (घोडा आदि) से भरे रहते थे।
उसके मोना चांदी भूमि आदि सम्पत्ति बहुत थी। वह आमदनी के उपा-

यों में सदा लगा रहता था । उसन बहुत आठमियों को भोजन आदि का इतना दान दिया था कि उनमें गया न जाना था । उनके दास दाम्नी गाय बैल भेड़ भेसादि बहुत थे । बहुतमें खजाने कांठार और आयुधशालाएँ थीं । पर्याप्त मेना थी । उनके शत्रु निर्बल थे । उनमें अपने कण्टकों (घिरोघ करने वाले गोत्रजों) का विनाश कर दिया था । कण्टकों की सम्पत्ति छीन ली थी । कण्टकों को देश निकाला दे दिया था । अतः वह कण्टकों में रहित था । तथा शत्रुओं का भी नाश कर दिया था । उनकी सम्पत्ति लूटली थी । गर्व मिटा दिया था । उन्हें देश निकाला दे दिया था । उन्हें सौन्दर्य आदि गुणों से जीन लिया था । शत्रुओं को नि मन्च कर दिया था ।

वहा (नगर में) दुःकाल कभी न पड़ता था । महामारा आठिका भयन था । सब तरह कुशल था । उपद्रव नहीं थे । मदा मुभिक्ष (मुकाल) रहता था । राजाने गजकुमार आदि द्राग होने वाले उपद्रवों को शान्त कर दिया था । वह राजा इस प्रकार राज्य का शासन करता था ॥ १४ ॥

मूलम्— तस्स णं अदीणसत्तस्स रण्णो धारिणीपा-
मोक्खं देवीसत्तस्सं अंगेहे याव्वि होत्था ।

तस्स णं अदीणसत्तस्स रण्णो धारिणी णामं देवी सुकु-
मालपाणिपाया अहीणपडिपुण्णपंचिदियसरीग लक्खण-
वंजगुणोववेया माणुस्माणप्पमाणपडिपुण्णसुजायसव्वंग-
सुंदरंगी ससिसोमाकारकंठपियदंसणा सुख्वा करयलपरिमि-
यपसत्थतिवलियवलियमज्जाकुंडलुल्लियहियगंडलेहा को-
मुह्यरयणिकरविमलपडिपुण्णमोमवयणा सिंगारागारचारुवे-
सा संगयगयहसियभणियविहियविलाससल्लियसंलावणि-
उणजुत्तोवयारकुसला पासादीया दरिसणिज्जा अभिस्वा

पडिख्वा, अदीणसत्तुएणं रण्णा सद्धि अणुरत्ता अविरत्ता
इहे सहपरिसरसरूवगंधे पंचविहे माणुस्सए कामभोगे
पच्चभवमाणी विहरति ॥ १५ ॥

भावार्थ— उस अदीनशत्रु नामक राजा के अन्तःपुर (रत्नवास)
में धारिणी आदि एक हजार स्त्रियाँ थीं । उनमें धारिणी पटरानी थी ।

अदीनशत्रु राजा की धारिणी नामकी पटरानी के हाथ पैर बड़े ही
कोमल थे । उसका शरीर सब लक्षणों से सहित और परिपूर्ण पाचों इन्द्रि-
यों से युक्त था । साथिया चक्र आदि लक्षण और तिल आदि ध्यञ्जनों
से युक्त था । मान (एक पुरुष प्रमाण जल का कुड भरे, उसमें उसी पुरुष
को बैठानेसे यदि एक द्रोण प्रमाण (३२ सेर) पानी कुडसे बाहर निकल
जाय, उसे मान प्राप्त कहते हैं) उन्मान (मनुष्य को तराजू पर बैठानेसे जो
आधा भार— परिमाण विशेष— होता हो उसे उन्मान प्राप्त कहते हैं)
प्रमाण (अपने अगुलों से जो १०८ अगुल हों, वह प्रमाण प्राप्त कहलाता
है) के अनुसार ही उसके सब अंग बने थे । इस लिए वह सुन्दरी थी ।
चन्द्रमा जैसा सौम्य और मनोहर अंग होने से, देखने वालों को उमका
रूप बड़ा ही प्यरा लगता था । मतलब यह है कि वह बहुत सुन्दरी थी ।
उसकी बीच में रही हुई शुभ त्रिवलियुक्त कमर मुट्टी में आजाती थी ।
उसके गालों पर की गई पत्र रचना (बेल बूटा) कानों के कुण्डलों से
चमकड़ा होगई थी । उसका मुख कार्तिक में उदय होने वाले स्वच्छ
चन्द्रमाकी चन्द्रिका सीखा था । उमका वेष सिंगार-रसका स्थान सा होगया
था । या उमका आकार निगाह से सहित और वेष सुन्दर था । उसका
चलना, हँसना, चेष्टा और कटाक्ष उचित था । प्रसन्नता पूर्वक परस्पर
भाषण करने में कुशल, तथा लोकव्यवहार में चतुर थी । देखने वालों का
चित्त देखते ही प्रसन्न होजाता था । वह दर्शनीय थी । मनोहर थी । देखने
वालों को उसका नवीन नवीन रूप मालूम होता था । अदीनशत्रु राजा

मे अनुरक्त थी- विवक्त न थी । उमका अर्थ रूप रम गत्र और स्पष्ट
प्रिय था । वह मनुष्यों के पाच प्रकार के काम- भोगों को भोगती हुई
रहती थी ॥ १५ ॥

मूलम्—* तते णं सा धारिणी देवी अण्णया कथाड तंसि
नारिसगंसि वासघरंसि अत्तिमंतरतो सच्चित्तकम्मे धाहिरओ
दूमियघट्टमट्टे विचित्तडल्लोगच्चिल्लगतले मणिरयणपणा-
सियंधकारे बहुसमसुविभत्तदेसभाण पंचवन्नसरससुरहिमु-
क्कपुप्फपुंजोवयारकलिण कालागुरुपवरकुंडुक्कतुक्कधूव-
सघमयंतगंधुद्वयाभिरामे सुगंधवरगंधिण गंधवट्टिभूए तंसि
नारिसगंसि सयणिज्जंसि सालिगणवट्टिए उभओ विव्यायणे
गंडविव्यायणे दुहओ उन्नण मज्जेणयगंभीरे गंगापुलिणवा-
लुयउहालसालिसए उवचियखोमियदुगुल्लपट्टपडिच्छे सु-
विरइयरयत्ताणे रत्तंसुयसंघुण सुरम्मे आडसागस्स्यन्नरणव-
णीयतूलफासे सुगंधवरकुसुमचुन्नसयणोवयारकलिण अद्धर-
त्तकालसमयंसि सुत्तजागरा ओहीरमाणी ओहीरमाणी
अयमेयारुवं उरालं कल्लाणं सिंध धत्तं मंगल्लं सरिमरीयं
महासुविणं पासित्ता णं पडिवुद्धा ॥ १६ ॥

भावार्थ— इसके अनन्तर किसी समय वह चाण्डिका महान्नी
पुरयान्माओं के रहने योग्य घर में, (जिन में एकअध्यायी) वह घर भीतर
चित्रों से युक्त और बाहर विम २ करके सुन्दर किया गया था । उसके
ऊपर का भाग त्रिचित्र विचित्र चित्रों में युक्त और नीचे का भाग देवीय-
मान था । मणियों और रत्नों से वहा का अन्वकार नष्ट होगया था । वह
एकदम समतल (ऊचा नीचा नहा) था । पाचों रंगों के लक्षण सुगन्धित
फूलों से सजा हुआ था । अगर चीड लोत्रान इत्यादि उत्तम उत्तम सुगन्ध-

वाले द्रव्यों से बनी हुई वृष की लहलहाती हुई सुगन्ध से रमणीय था । अच्छी और उत्तम गव से सुगवित था । सुगन्ध की अधिकता होने से वह गन्ध की गुटिका (गोली) सा मान्त्र होता था । उस पुण्यात्माओं के रहने योग्य घर में (एक शय्या थी) वह शय्या शरीर के बराबर तकिया से युक्त थी । शिर गाल और पैरों के नीचे भी तकिया लगा हुआ था । वह शय्या दोनों तरफ ऊँची और बीच में नीची थी । जैसे गंगा नदी के तट की रेत पर चलने से पैर नीचे चला जाता है, इसी तरह शय्या पर पैर रखने से पैर नीचे धँस जाता था, क्योंकि वह बहुत कोमल थी । कसीदा किए हुए सूती और अलसीमण वस्त्रों का चादर बिछा हुआ था । धूल आदि से रक्षा करने के लिए एक वस्त्र था, वह अन्य समय शय्या पर ढका रहता था । वह मच्छरदानी से ढकी थी । अतिशय रमणीय थी । उसका स्पर्श चर्म के वस्त्र (सामरी जैसे) रुई, वृष (वन्स्पति विशेष) मकखन और आक की रुई सरीखा था । सुगन्धि-युक्त उत्तमोत्तम फूलों से चूर्णों से तथा शय्या को शोभित करने वाली अन्य उत्तम वस्तुओं से युक्त थी । उस सेज पर आधी रात के समय— जब कि रानी न तो गाढ निद्रा में थी और न जाग ही रही थी— बड़ा कल्याणकारी, उपद्रव रहित, सौभाग्य करने वाला, मंगलमय और मश्रीक (सुन्दर) एक महास्वप्न देखकर जागी । १६।

मूलम्— हाररययखीरसागरससंककिरणदगरययमहासेल-
पंडुरतरोरुमणिज्जपेच्छणिज्जं थिरलट्टपउट्टवट्टपीवरसुसिलि-
ट्टविसिट्टतिक्खदाढाविडंघियमुहं परिकम्मियजच्चकमलको-
मलमाइयसोभंतलट्टउट्टंरत्तुपलपत्तमउयसुकुमालतालुजीहं

इवाचनान्तर मे अधिफ पाठ-रत्तुपलपत्तमउयसुकुमालतालुनिस्त्ता-
लियग्गजीहं, महगुलियाभिसत्तपिगलच्छ ।

अर्थ— लाल फल के पते के समान अत्यन्त कोमल जाँग में निराला है जिसने ऐसे, और भुष की गोक्षी के समान भासों वाले ।

मृसागपवरकणगताविद्यभावत्तायंतवदतडियविमलसरसन-
यणं विसालपीवरोमं पडिपुन्नविउलखंधं मिडविसयसुद्ध-
मलकखणपसत्थविच्छिन्नकेसरसडोवमोभियं असियसुनि-
म्मियसुजापअप्फोडियलंगूलं सोमं सोमाकारं लीलायंतं
जंभायंतं नहयलाओ ओवयमाणं निययवयणमतिवयंतं
साहं सुविणे पासित्ता णं पडिवुद्धा ॥ १७ ॥

भावार्थ— रानी ने स्वयं में हाथ, चादी, श्रीर ममुद्र, चन्द्रमा की
किरण, रजतमहाशूल (वैनाट्य पर्यंत) और पानी की घृद की तरह बहुत सफेद,
लम्बे चौड़े, रमणीय, अत दर्शनीय, निम्न और मनोहर कलाटिवाले, तथा
गोठ स्थल मिली हुई उत्तम और तेज दाहों युक्त मुखवाले मस्कार किये गये उ-
त्तम जाति के कमल के समान कोमल, यथाप्रमाण और अत्यन्त मनोव होठों
वाले, लाल कमल की तरह कोमल तालु और जिह्वा वाले, मूय में रखे
हुए और घुमते हुए तथाए हुए उत्तम मोने और विजली जैसी निर्मल,
बराबर और गोल गोठ आरतो जाने, मोटी और मजबूत जाय वाले, धूर्य
और मोटे कंधे वाले, कोमल स्वच्छ मृच्चन और फैले हुए सुन्दर गर्दन के
वालों (केसर) की छटा से शोभित, धरती पर फटकार कर ऊपर कर के
फिर नीचे को झुकी है पूछ जिमकी ऐसे, तथा सौम्य, सौम्याकार, काँदा
करते हुए, जमाई लेते हुए सिंह को आकाश से उतरकर अपने मुँह में
घुमते हुए देखा ॥ १७ ॥

मूलम्— तए णं सा धारिणी देवी अयमेचारूवं उरालं
जाव सस्मिरीयं महासुभिणं पासित्ता णं पडिवुद्धा समाणी
दृदुत्तुजावहियया धाराहयकलंवपुष्फंगपि व समृससियरोम-
कूवा तं सुविणं ओगिण्हति , ओगिण्हिता सयणिज्जाओ
अब्भुद्धेइ, सयणिज्जानो अब्भुद्धेत्ता अतुरियमचवलमसंभंताए

अचिलंधियाए रायहंससरिसीए गईए जेणेव अदीणसत्तुस्स
रन्नो सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ ॥ १८ ॥

भावार्थ— इसके पश्चात् वह धारिणी नामकी महारानी इस प्रकार
के उदार (यावत्) सश्रीक महान् स्वप्न को देखकर (जागी और) जाग-
कर उसका हृदय हर्षित-सतुष्ट हो गया । मेघ की धारासे जैसे कदव वृक्ष
का फूल खिल जाता है, उसी तरह रोमाञ्चित होती हुई महारानीने स्वप्न
का अवग्रह किया । अवग्रह करके शय्या से उठी । शय्या से उठकर चप-
लता रहित शरीर और स्थिर मन होकर, राजहस की तरह मन्द मन्द गम-
न करती हुई, जहां राजा अदीनशत्रु की सेज थी, वही पहुँची ॥ १८ ॥

मूलम्— तेणेव उवागच्छित्ता अदीणसत्तुं रायंताहिं
इट्ठाहिं कंताहि पिपाहि मणुन्नाहिं मणामाहि उरालाहिं कल्ला-
णाहि सिवाहि धन्नाहि मंगल्लाहि सस्सिरीयाहिं मियमद्धुर-
मंजुलाहि गिराहि संलवमाणी संलवमाणी पडिवोहेत्ति । प-
डिवोहेत्ता अदीणसत्तुणा रत्ता अब्भणुन्नाया समाणी नाना-
मणिरघणभत्तिचित्तंमि भद्दासणंसि णिन्नीयन्ति । णिन्नी-
इत्ता आसन्था वीसन्था सुहासणवरगया अदीणसत्तुं रायं
ताहि इट्ठाहि कंताहि जाव संलवमाणी संलवमाणी एवं व-
यासी- ॥ १९ ॥

भावार्थ— वही पहुँचकर अदीनशत्रु राजाको इष्ट, कान्त, प्रिय,
मनोज्ञ, अभिगम, उदार, कल्याणकारी, शिवकारी, वन्द्य, मंगलकारी, स-
श्रीक, मृदु, मधुर और मज्जल वचनो से बोलकर जगाया । जगाकर राजा
अदीन शत्रु के आज्ञा देने पर अनेक भणिए और रत्नों से विचित्र उत्तम
आसन पर बैठ गई । बैठकर चलने के श्रम और क्षोभ को मिटा कर सुख
कर आसन पर बैठी हुई, अदीनशत्रु राजा को इष्ट और मनोहर वचन
बोलती हुई, इस प्रकार कहने लगी— ॥ १९ ॥

मूलम्— एवं खलु अहं देवाणुष्पिया! अज्ज तंसि तारि-
सगंसि सयणिज्जंसि सालिगणवट्टिणं तं चेव जाव नियगव-
यणमहवयंतं त सीहं सुविणे पासित्ता गं पड्डिवुद्धा । तणं
देवाणुष्पिया ! एयस्स उरालस्स जाव महासुविणस्स केमत्ते
कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविससइ ? ॥ २० ॥

भावार्थ— ह देवानुप्रिय ! आज मैं उन प्रकार की संज्ञक पर—
जिसमें कि शरीर की उपाय तकिया लगा हुआ था और पूर्वोक्त विशेषणों
से युक्त थी— अपने मुह में धुनने हुए मिह को नपने में देखकर जागी
हूँ । ह देवानुप्रिय ! इस तरह के उन उदार महास्वप्न का मुझे क्या
विशेष फल होगा ? ॥ २० ॥

मूलम्— तणं मे अदीणसत्तु राया धारिणीए देवीए
अंतिंय एयमट्ठं सोच्चा निसम्म द्दट्टुद्ध जाव हियण धाराह्य-
नीवसुरभिकुरुमचंचुमालइयतणुयज्जससियगेमकूवे तं सुविणं
ओगिएहइ । ओगिण्हित्ता ईहं पविसइ, ईहं पविसित्ता
अप्पणो साभाविणं मइपुब्बणं वुद्धिविन्नाणेणं तस्स
सुविणस्स अत्योगहणं करेइ । तस्स सुविणस्स अत्योगहणं
करित्ता धारिणिं देवि ताहि इट्ठाहिं कंताहि जाव संगल्लाहिं
मिउमहुरसस्सिरीयाहि गिराहि संलवमाणे संलवमाणे एवं
वयासी— ॥ २१ ॥

भावार्थ— उन समय वाग्नी रानी के मुख से इस विषय को
सुनकर और हृदय में वागण करके राजा अर्धनशत्रु काचित्त (शत्रु) दपित
और सनुष्ट हुआ । जैसे मंत्र (जल)की वागके गिने से मुगन्धित कदम्ब
वृक्ष खिल जाता है, उसी तरह राजा का शरीर पुलकित होगया और
गोंगटे खड़े होगये । इस प्रकार राजा को स्वप्न का अवग्रह हुआ, अवग्रह ज्ञान
होने पर ईहा-ज्ञान की प्रवृत्ति हुई । ईहा की प्रवृत्ति होकर मतिज्ञान से

उत्पन्न हुई स्वाभाविक प्रतिभा ने उस स्वप्न का अर्थ जाना । उस स्वप्न का अर्थ जानकर इष्ट कान्त (यावत्) मागलिक मृदु मधुर और सश्रीक आदि वचनों से बोलता हुआ, इस प्रकार कहने लगा— ॥ २१ ॥

मूलम्— उराले शं तुमे देवी ! सुविणे दिष्टे, कल्लाणे णं तुमे जाव ससिसरीए णं तुमे देवी ! सुविणे दिष्टे, आरोगगतुट्टिदीहाउकल्लाणमंगललकारए णं तुमे देवी सुविणे दिष्टे, अत्यलाभो देवाणुप्पिए ! भोगलाभो देवाणुप्पिए ! पुत्तलाभो देवाणुप्पिए ! रज्जलाभो देवाणुप्पिए ! एवं खलु तुमं देवाणुप्पिए नवणहं मासाणं बहुपडिपुत्ताणं अद्धट्टमाणराहं-दियाणं विइक्कंताणं अरुहं कुलकेउं कुलदीवं कुलपव्वयं कुलवडंसयं कुलतिलगं कुलकित्तिकरं कुलनन्दिकरं कुलजसकरं कुलाधारं कुलपायवं कुलविवद्धणकरं सुकुमालपाणिपायं अहीणपडिपुत्तपंचिदियसरीरं जाव ससिसोभाकारं कंतं पियदंसणं सुरुवं देवकुमारसमप्पभं दारगं पयाहिसि । से वि यणं दारए उम्मुक्कवालभावे विन्नायपरिणयमित्ते जोव्वगागमणुप्पत्ते सुरे वीरं विक्कंते विन्धिन्नविउलबलवाहणे रज्जवई राया भविस्सइ । तं उराले णं तुमे जाव सुमिणे दिष्टे, आरोगगतुट्टिजावमंगललकारए शं तुमे देवी सुविणे दिष्टेत्तिकट्टु धारिणि देवि ताहि इट्टाहि जाव वग्गृहि दोच्चं पि तच्चं पि अणुवूहति ॥ २२ ॥

भावार्थ— हे देवी ! तुमने उदार स्वप्न देखा है । तुमने कल्याणकारी स्वप्न देखा है । हे देवी ! तुमने सश्रीक स्वप्न देखा है । हे देवी ! तुमने आरोग्य सतोष दीर्घ-आयु कल्याण और मंगल करने वाला स्वप्न देखा है । हे देवानुप्रिये ! अर्थ-लाभ होगा । हे देवानुप्रिये ! भोग का लाभ होगा । हे देवानुप्रिये ! पुत्र का लाभ होगा । हे देवानुप्रिये ! राज्य

का लाभ होगा। इस प्रकार हृ देवानुप्रिये ! पूरे नव महीने और साढ़े मात दिन बीत जाने पर, हमारे कुल की ध्वजा के समान, कुल के दीपक, कुल में पर्वत के समान, कुल के मुकुट, कुल के तिडक, कुल की कीर्ति बढ़ाने वाले, कुल की समृद्धि करने वाले, कुल का यश करने वाले, कुल के आधार, कुल को आश्रय देने में वृक्ष के समान, कुल को बढ़ाने वाले, कोमल हाथ पैर वाले, सुन्दर और पाचां इन्द्रियों से पूर्ण शरीरवाले (यात) सौम्य आकृति वाले, मनोहर, देखने में प्रिय, चन्द्रमा ही तरह मुख्य, देवकुमार सीखी प्रभावले बालक को उत्पन्न करोगी—जन्म दोगी। वह बालक बाल्यावस्था को त्यागते ही ब्रह्म कलाओं का विशेष जानकार होगा। यौवन अवस्था में दानवीर, गणवीर, पराक्रमी, विस्तीर्ण और विपुल मेना तथा बाहनों (समांगियों) वाला राजराजेश्वर होगा ॥ २२ ॥

मूलम्— तए णं सा धारिणी देवी अदीणसत्तुम्स रत्तो अंतियं एयमट्ठं सोच्चा निसम्भ हट्टुत्तुट्ठजावहियया करयलपरिग्गहियं दसनहं सिरसावत्तं मत्थए अंजलि कट्टु गवंवयासी— एवमेयं देवाणुप्पिया ! तहमेयं देवाणुप्पिया ! अवितहमेयं देवाणुप्पिया ! असंदिट्ठमेयं देवाणुप्पिया ! इच्छियमेयं देवाणुप्पिया ! पडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया ! इच्छियपडिच्छियमेयं देवाणुप्पिया ! से जहेयं तुज्जे वदहत्तिकट्टु तं सुविणं सम्मं पडिच्छइ ; पडिच्छित्ता अदीणसत्तुएणं रण्णा अब्भणुत्ताया समाणी शाणामणिरण्णभत्तिचित्ताओ भद्दासणाओ अब्भुट्ठेइ ; अब्भुट्ठेत्ता अतुरियमचवलजावगतीए जेणेव सए सयणिज्जे तेणेव उवागच्छइ ॥२३॥

भावार्थ— तुमने उदार (यात्र) स्वप्न देखा है। हे देवि! तुमने आरोप्य मन्तोष और (यात्र) मंगल करने वाला स्वप्न देखा है।

इस तरह धारिणी महारानी को इष्ट (यावत्) वचनों से राजा ने दो तीन वार कहा । उसी समय वह धारिणी रानी अदीनशत्रु राजा से इस विषय को सुनकर और हृदय में धारण करके हर्षित और सन्तुष्ट होकर , हाथ जोड़कर आवर्तन करके मस्तक से अजलि लगाकर इस प्रकार बोली— हे देवानुप्रिय ! यह इसी प्रकार है । हे देवानुप्रिय ! यह उम्मी प्रकार है । हे देवानुप्रिय ! यह सत्य है , निस्सन्देह है, इष्ट है, अभीष्ट (प्रतीच्छित) है , इष्ट-अभीष्ट है । आप जो कहते हैं, उसे मैं अच्छी तरह अगीकार करती हूँ । (इस प्रकार) अगीकार करके अदीनशत्रु राजा की आज्ञा मिलने पर नाना मणियों और रत्नों से विचित्र उम आमन (सिंहासन) से उठी । उठकर वगे धारे चपलता रहित (यावत्) राजहम मी गति से जहाँ अपनी सेज थी, वहीं आ गई ॥ २३ ॥

मूलम्— तेषोव उवागच्छित्ता सयणिज्जंसि निसीयति, निसीहत्ता एवं वयासी-मा से से उत्तमे पहाणे मंगल्ले सु-विणे अन्नेहि पावसुविणेहि पडिहम्मिस्सइत्ति कट्ठु देवगुरु-जणसंबद्धाहि पसत्थाहि मंगल्लाहि धम्मियाहि कहाहिं सुविणजागरिणं पडिजागरमाणी पडिजागरमाणी विहरति ॥ २४ ॥

भावार्थ— वहाँ आकर तेज पर बैठ गई । बैठ कर इस प्रकार बोली “मेरा वह उत्तम प्रधान और मागलिक स्वप्न किसी दूसरे पाप स्वप्न से नष्ट न होजाय ” इसलिए वह देव गुरु और जन सम्बन्धी अच्छी १ मागलिक धर्मकथाओं से अपने स्वप्न के फल को बनाए रखने के लिए वार २ नाद को लग कर जागती रही ॥ २४ ॥

मूलम्—*तते षं से अदीणसत्तूराया पच्चसकालसम-यंसि कोडुविषयपुरिसे सहावेड । सहावेत्ता एवं वदासी-खिप्पा-

मेव भो देवानुष्विया वाहिरियं उवट्टाणासालं अज सचित्सेसं
 परमरम्मं गंधोदगसित्तसुइयसंमज्जिओवलित्तं पंचवन्नसर-
 ससुरभिमुक्कफुप्फुपुंजोवयारकलियं कालागुरुपवरकुंदुक्क
 तुक्ककधुवड्ढंत्तं मवमधंनगंधुदुयाभिरामं सुगंधवरगंधियं
 गंधवट्ठिभूयं करेह य, कारवेह य, इयमाणत्तियं पच्चप्पिगह्।
 तते णं ते कोट्टंविग्रपुरिमा, अदीणासत्तुणा रण्णा एवं वुत्ता
 समाणा हट्टुट्टा जाव पच्चप्पिणाति । तते गां से अदीणसत्तु
 राया कल्लं पाउप्पभायाण रयणीणं फुल्लुप्पलकमलकामलु-
 म्मीलियंमि अहापंडुरे पत्ताए रत्तामोवप्पगासकिसुयसुयमुह
 गुंजट्टारागंधुजीवगपारावयचलणनयणपरहुयसुरत्तलोयणा-
 जासुयणक्कुसुमजलियजलणननणिजकलसहिगुलयनिगर-
 रुवाहरंगरेहंतसरिस्सिणं दिवागरे अद्द ऋसेण उदिग्,
 तस्स दिग्गकरकरपरंपरावयाणपारट्टंमि अंधयारं बालानव-
 कुंकुमेण खच्चिग्रव्वजीवलोण लोयणाचिसुय्याणुयासविगसं-
 तविसददंसियंमि लोणं कमलागरसंडवोहण उट्टियंमिस्सरे
 सहस्सरस्सिमि टिग्गयरे तैयसा जलंते सयणिज्जाओ उट्टेति,
 उट्टेत्ता जेणोव अट्टणमाला तेणोव उवागच्छइ ॥ २२ ॥

भावार्थ— इन के अनन्तर प्रातः काल उन अदीनशत्रु राजा ने
 अपने मेघकों को बुलाया । बुला कर इन प्रकार बोला— भो
 देवानुष्विया! आज शीत ही बाहर की उपस्थानमाला—समाग्यान को विशेष रूप से
 परमरमणीय, गवोदक से मीचकर पत्रि और माफ करो, लीपो, पाचों रगों
 के सम सुगन्धित फूलों से युक्त करो, ऋणागर चीड लोवान आदि की
 मवमवायमान गंध से शोभित, अतएव गंध की गोली के समान सुगन्धित
 करो और दूरों ने कराओ । मेरी इन आज्ञा को पूरी करके मुझे सूचित
 करो । इसके बाद उन सेवकों ने अदीनशत्रु राजा के ऐसा कहने पर हर्षित

होते हुए आज्ञानुसार कार्य क्रमके सूचित किया । पश्चात् जिसमें खिले हुए पद्म और कमलो (एक प्रकार के हरिणों) के नेत्र खुल गये थे ऐसे— स्वच्छ प्रभात होने पर, लाल अशोक के प्रकाश, टाक के फूल, तोते की चोंच, चिगमटी के आधे लाल हिस्से, दुपहरिया के फूल, कन्नर के पाव, कोयल की लाल लाल आंखों, जपा कुमुम, जलती हुई अग्नि, सोने के कलश और हिंगुल के समूह की प्रभा से भी अविक्र प्रभा वाले सूरज के क्रमशः उदित होने पर, और उम की किरणों के गिरने से अन्वकार का नाश प्रारंभ होने पर बालसूर्य रूपी कुकुम से जीवलोक के रंगे जाने पर लोक में दखे जा सकने वाले विषयो (पदार्थो)का स्पष्ट प्रतिभास होने पर, कमलो को विकसित करते हुए एक हजार किरण वाला सूर्य तेज से चमकने लगा । उसी समय राजा अदीनशत्रु शय्या से उठा । उठकर जहा व्यायामशाला (अखाडा) थी वहाँ गया ॥ २५ ॥

मूलम्— उवागच्छइत्ता अट्टणसालं अणुपविसइ ।
 अणुपविसित्ता अणोववायामजोगवगणवामदणमल्लजुद्ध-
 करणेहि संते परिसंते सयपागसहस्सपागेहि सुगंधवरतेल्ल-
 मादिएहि पीणणिज्जेहि दीवणिज्जेहि दप्पणिज्जेहि मद्दणिज्जेहि
 विहणिज्जेहि सत्विदियगाघपल्लहायणिज्जेहि अवभंगेहि अवभं-
 गिए समाणे तेल्लचम्मंसि पडिपुन्नपाणिपायसुकुमालकोमल-
 तलेहि पुरिसेहि छेएहि दक्खेहि पट्टेहि कुसलेहि मेहावीहि
 निउणेहि निउणसिप्पावगएहि जियपरिस्समेहि अवभंगणप-
 रिमद्दणुव्वलणकरणाणुणनिम्माएहि, अट्टिसुहाए मंससुहाए
 तथासुहाए रोमसुहाए चउत्विहाए सवाहणाए संवाहिए समा-
 णे अवगयपरिस्समे नरिदे अट्टणसालाओ पडिनिक्खमइ,
 पडिनिक्खमित्ता जेणव मज्जणघरे तेणेव उवागच्छइ, उवा-
 गच्छित्ता मज्जणघरं अणुपविसइ, अणुपविसित्ता समंत-

(मुत्त) जालाभिरामे विचिन्तमणिरयणकोटिमन्तले रमणिजे
 ष्हाणमंडवंसि णाणामणिरयणभत्तिचिन्तंसि ष्हाणपीठंसि
 सुह्निस्त्रे सुहोदगेहिं पुष्पादगेहिं गंधोदगेहिं सुहोदगेहिं य
 पुणो पुणो कल्लाणगपवरमज्जणविहीण मज्जिण तत्थ कोउ-
 यसण्हि वहुविहेहिं कल्लाणगपवरमज्जणावसाणे पम्हलसुकु-
 मालगंधकासाडयत्तुहिंयंगे अहतसुमहग्गदूसरयणसुसंबुडे
 सरमसुरभिगोसीसचंदणाणुलित्तगतते सुइमालावन्नगविलेवणे
 आविद्धमणिसुवत्ते कप्पियहारद्वहारनिसरयपालंबपलंबमाण-
 कटिसुत्तसुकयसोहं पिणद्धगेविज्जअंगुलिज्जगलललिंयंगल-
 लियकयाभरणं णाणामणिकडगतुडिययंभियसुण अहियस्व-
 सरिसरीण कुंडुलुज्जांडयाणणे मउडदित्तसिरण हारोत्थयसु-
 कयरइयवच्छे पालंबपलंबमाणसुकयपडउत्तरिजे मुहियापिंग-
 लंगुलीण णाणामणिकणगरयणधिमलमहरिहनिउणोवियमि-
 समिसंतविरइयसुमिलिट्टविसिट्टलट्टसंठियपसत्थआविद्धवीर-
 वलए कि वहुणा, कप्पम्कखण चेष सुअलंक्रियविभृसिए
 नरिदे सकोरंटमल्लदामेणं द्यत्तेणं धरिज्जमाणेणं उभओ चउ-
 चामरवालवीडयंगे मंगलजयसहकयालोण अणेगगणनाय-
 गदंडनायगराईसरतलवरमाडंविद्यकोट्टुवियमंतिमहामंतिगण-
 गदोवारियअमचचेडपीठमहनगरणिगमसेट्टिसेणावडसत्थवा-
 हदूयसंधिवालसद्धि संपरिवुडे, धवलमहामेहनिग्गण विव
 गहगणदिप्पंतरिक्खनारागणाण मउक्के ससिंव पियदंसणे
 नरवई मज्जणघराओ पडिनिक्खमति ॥ २६ ॥

भावार्थ— जाकर अखाड मे प्रवेश किया । प्रवेश करके ऊपरत
 के योग्य उठलन कर एक दूमेरे की आपस मे बाह आदि को मोडकर
 और कुशती आदि कसरत करके यक जने पर शनपुष्ट और सहस्रपुष्ट

वाले सुगन्धित तेल आदि से, तथा रुधिर आदि धातुओं को सम करने वाले, जठराग्नि को दीप्त (तेज) करने वाले, काम को बढ़ाने वाले, मास को बढ़ाने वाले, पाचों इन्द्रियों और शरीरको प्रसन्न करनेवाले, तेल आदि के लेप से अविक्ल हाथ पैर वाले, सुन्दर और कोमल तलुवे वाले, भवसर को जानने वाले, ७२ कलाओं को जानने वाले, दक्ष, वाग्मी यां आगे आगे चलने वाले, कुशल, मेधावी, निपुण, मर्दनके तरवको जानने वाले, परिश्रम से न थकने वाले, लेप मालिश और उवटन के अभ्यासी पुरुषों द्वारा मालिश कराई और तैलचर्म (चमड़े के भांमे) से रगड़ाया । हड्डियों को सुख देने वाली, मास को सुख देने वाली, चमड़े को सुख देने वाली, रोगों को सुख देने वाली, चर प्रकारकी सत्राधना द्वारा आराम लेने से जब राजा की यकावट दूर होगई, तब वह मर्दनशाला से निकला । निकलकर स्नानागार में आया । आकर स्नानागार में धुसा । धुसकर सब तरफ से जालियां से सुन्दर चित्र विचित्र रत्न और मणियों से जड़े हुए तले वाले रमणीय स्नान मंडप में मणियों और रत्नों से खचित चौकी पर बैठकर, शुभोदक (पवित्र स्थानों से लाये हुए जल) गंधोदक (चन्दनादि मिश्रित जल) पुष्पोदक (फूलकी गंध मिले हुए जल) और शुद्धोदक(स्वाभाविक जल) से स्वास्थ्यकर विधि से कौतुक पूर्वक बार २ स्नान किया । स्नान कर चुकने पर रुँदर सुन्दर सुगन्धित सुकोमल वस्त्र से शरीर पोछा और बहुमूल्य नवीन वस्त्र पहना । उसी समय घिसा हुआ सुगन्धयुक्त गोशीर्ष चन्दन का शरीर पर लेप किया । पवित्र फूल-माला धारण की और केसर आदि का लेप किया । मणियों और सोने के गहने पहने । हार (अठारह लड्डों का) अर्द्धहार (नव लड्डा) और तीन लड्डा हार पहना । कमर में लम्बी और लटकते हुए झूमके वाली करधनी पहनी । गले में आभूषण और अगुलियों में अगूठिया पहिनी । इनके सिवाय और भी बहुत से सुन्दर २ आभूषण धारण किए । अनेक तरह के हाथ और भुजाओं के

मणिमय, आभूषणों से उनके हाथ यँभ से गये थे। शरीर के अतिगम रूपमान् होने से वह और भी शोभायमान हुआ। कानों के कुटलों से मुद्रत्वमकने लगा। मुकुट से मन्त्रक दीप्त हो गया। तारों से यश्मन्मल (छाती) टंक गया और सुन्दर मान्न होने लगा। एक लटकता हुआ लम्बा ना बढ़िया दुपट्टा धारण किया। अगुलिशा अग्रटिपो मे पीली हो गई। तथा चतुर कारीगरो द्वाग बनाए हुए नाना तार के विमल विजयमनोहर देदीयमान अच्छे जोड वाले बटुमूल्य सोने मणि गनों के वीत्वलय धारण किए।

स्वादा क्या कहें ? कल्पवृक्ष के समान आभूषणों से अलङ्कृत और वस्त्रों से भूषित, कौण्टिक आदि फल्लो की मालाओं से बने हुए छत्र जो धारण करने वाला नरेन्द्र, चाग चामरो से शोभित अग वाला, जिमे देखकर लोग जयशब्द कह रहे थे ऐसा वह राजा, इनकर गणनायक, दण्डनायक, माण्डलिक राजा, युवराज, तलवार (गजा द्वाग उपाधि प्राप्त) मुकुटबन्ध राजा, कौटुम्बिक (कुल कुटुम्बों के स्वामी) मंत्री, महामंत्री, ज्योतिषी या मण्डारी द्वारपाल (द्वान) राज्य के अविष्टाता, सेवक, पीठमर्दक (एक प्रकारके मित्रवत सेवक) प्रजा, गजकर्मचारी, सेठ, सेनापति, माहूकार, दूत और सन्धि की रक्षा करने वालों से विग हुआ राजा स्नान गृह से इस तरह निकला, जैसे उज्वल और बडे २ बदलो में से निकला हुआ, ग्रहों से दीप्त नक्षत्र और ताराओं के समुदाय में चन्द्रमा हो ॥ २६ ॥

मूलम्—पडिनिकखमित्ता जेणेव वाहिरिया उवट्टाण-
 साला तेणेव उवागच्छइ । उवागच्छित्ता साहासणवरगते
 पुरथाभिमुहे सन्निसन्ने । तते णं से अदीणसत्तू राया अप्पणो
 अदूरमासंते उत्तरपुरच्छिमे दिसिभागे अट्ट भद्दासणाइं
 सेयवत्थपच्चुत्थुयाइं सिद्धत्थमंगलोवयारकयसंतिकम्माइं रया-

१ कोई ऐसा वीर है, जो मुझे जीत कर इन्हें ले लेवे? ऐसी स्पर्द्धा करके जो बलय (केडे, धारण किए जाते हैं, उन्हें 'वीरबलय' कहते हैं

वेह । रयावित्ता गाणामणिरंयणमंडियं अहियपेच्छणिज्जरुवं-
महग्घवरपट्टणुग्गयं सण्हबहुभत्तिसयचित्तट्ठाणं ईहामियउस-
भतुरयणरमगरविहग्गवालगकिन्नररुरुसरभचमरकुंजरवगल-
यपडमलयभत्तित्तं सुखचियवरकणगपवरपेरंतदेसभांणं
अविंभतरियं जवणियं अंछावेह ॥ २७ ॥

भावार्थ— निकलकर जहा बाहरी सभा थी, वहा गया । सिंहासन
के पास जाकर पूर्व दिशा मे मुह करके बैठा । इसके पश्चात् उस अदीन-
शत्रु राजा ने पास ही, ईशान कोण में, सफेद वस्त्रों से ढके हुए आठ
भद्रासन रखाए । उन आसनों पर सर्पों आदि मागलिक उपचार द्वारा
विष्णों का उपशम करने के लिए शान्ति-कर्म किया ।

उन आसनो को रखवाकर नाना मणि और रत्नो से शोभायमान,
दर्शनीय रूप वाली, बहुमूल्य और अच्छे (जहा अच्छे वस्त्र बनते है)
शहर में बनी हुई, मूद्धम और अनेक प्रकार के बहुत से चित्रों का स्थान,
भेडिया बैल घोडा मगर नर पक्षी सर्प किन्नर रुद्र (एक प्रकार के मृग),
अष्टापद, चमरी गाय, हाथी, वनलता, और पद्मलता आदि के चित्रों से
चित्रित, जिसके कोने उत्तम सोने की कलावत् से मटित थे, ऐसा अन्दर
का पर्दा डाल दिया ॥ २७ ॥

मूलम्— अंछावइत्ता अच्छ (? त्थ) रगमउअमस्सरग-
उच्छ (त्थ) इयं धवलवत्थपच्चुत्थुयं विसिट्ठं अंगसुहफासयं सु-
मउयं धारिणीए देवीए भद्रासणं रयावेह । रयावेत्ता कोटुंबि-
यपुरिसे सदावेइ, सदावेत्ता एवं वदासी-खिप्पामेव भो देवाणु-
प्पिया । अट्टंगमहानिमित्तसुत्तत्थपाढए विविहसत्थकुसले
सुमिणपाढए सदावेह । सदावेत्ता एयमाणत्तियं खिप्पामेव
पच्चप्पिणह । तते णं ते कोटुंबियपुरिसा अदीणसत्तुणा रणणः

एवं वृत्ता समाणा हृदुतुदुजावहियया करयलपरिगगहियं
दसनहं सिरसावतं मत्थण अंजलिं कदु एवं देवो तहत्ति,
आणाण विणएणं वयणं पडिसुणेति । पडिसुणेत्ता, अदीण-
सत्तुस्स रत्तो अंतियाओ पडिनिक्खमंति ॥ २८ ॥

भावार्थ— पदां डालकर, महागनी धारिणी के लिए वहां एक
अच्छा सा सिंहासन रखवाया । सिंहासन पर कोमल गलीचा और गलीचे
पर एक सफेद वस्त्र बिछाया गया । सिंहासन अच्छा और कोमल होनेसे
शरीर को आगम पहुँचाने वाला था । सिंहासन रखवाकर सेवकों को बुला-
या । बुलवाकर कहा — हे देवानुप्रिय ! शीघ्र ही अष्टम ज्योतिष
शास्त्र के पाठकों को— जो कि अनेक शास्त्रों में कुशल हैं— और
स्वप्नशास्त्रियों को बुलाओ । बुलाकर शीघ्र ही मुझे सूचित करो । अदीनशत्रु
राजा के यह कहने पर, सेवकों का हृदय हर्षित और सन्तुष्ट होगया । वे
लोग, दोनों हाथ जोड़कर, दनों नखों (अंगुलियों) को इकट्ठा करके, मस्तक
के पास अंजलि करके बोले—देव ! आपकी आज्ञा प्रमाण है—ऐसा ही होगा ।
इस प्रकार कहकर आज्ञा को स्वीकार किया । स्वीकार करके राजा
अदीनशत्रु के पास में चल दिये ॥ २८ ॥

मूलम्—पडिनिक्खमित्ता हत्थिसीसस्स नगरस्स मज्झं-
मज्झेणं जेणेव सुमिणपाढगाणं गिहाणि, तेणेव उवागच्छ-
न्ति, उवागच्छित्ता सुमिणपाढण सदावंति । तते गं ते
सुमिणपाढगा अदीणसत्तुस्स रत्तो कोट्टुं वियपुरिसेहिं सदाविया
समाणा हृदुतुदुजावहियया ण्हाया कयवलिकम्मा जावपाय-
च्छित्ता अप्पमहग्घाभरणा लं कियसरीरा हरियालियसिद्धत्थ-
यकयमुद्दाणा सयेहि सयेहि गेहेहिं तो पडिनिक्खमंति, पडि-
निक्खमित्ता हत्थिसीसरस नगरस्स मज्झंमज्झेणं जेणेव
अदीणसत्तुस्स रणो भवणवडिसगडुवारं तेणेव उवागच्छन्ति,

उवागच्छिता एगयओ मिलयंति, एगयओ मिलइत्ता
अदीणसत्तुस्स रण्णो भवणवडिंसगदुवारेणं अणुपविसंति ।
अणुपविसित्ता जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव अदी-
णसत्तू राया तेणेव उवागच्छंति, उवागच्छित्ता अदीणसत्तुं
रायं जएणं विजएणं वट्ठावेंति । अदीणसत्तुणा रण्णा अच्चि-
या वंदिया पूहया माणिया सक्कारिया सम्माणिया ममाणा
पत्तेयं पत्तेयं पुव्वुन्नत्थेसु भद्दासणेसु निसीयंति ॥२६॥

भावार्थ— जाकर हस्तिशीर्ष नगर के बीचों बीच होकर, जहां
स्वप्न शास्त्रियों के घर थे, वहाँ पहुँचे । पहुँचकर स्वप्नशास्त्रियों को बुलाया ।

अदीनशत्रु राजा के आठमियों द्वारा बुलाए जाने पर स्वप्न भी बहुत सन्तुष्ट
हुए—प्रसन्न चित्त हुए । स्नान करके, गृह-देवतों की पूजा करके, ललाट
पर मागलिक तिलक और मस्तरु पर दही चावल आदि छिटककर, थोड़े
किन्तु बहुमूल्य आभरणों से शरीरको अलंकृत करके, मस्तरु पर दूब और
सरसों आदि रखकर अपने अपने घरों से निकले । निकलकर हस्तिशीर्ष
नगरके बीच में होकर, जिस तरफ अदीनशत्रु राजा के मुख्य महल का
दर्वाजा था, उसी तरफ गये । जाकर, सब इकट्ठे हुए । इकट्ठे होकर, मुख्य
महल के द्वार में घुसकर जहा बाहरी सभा और राजा अदीनशत्रु थे, वहाँ
गये । जाकर 'जय हो' 'विजय हो' कहकर राजा को वधाई दी । राजा
अदीनशत्रु ने भी उन सब की अर्चना की, वन्दना की, पूजा की, मान किया,
सत्कार और सन्मान किया । वे पहले रखे हुए उन भद्रासनों पर
अलग अलग बैठ गये ॥ २६ ॥

मूलम्— तते रां से अदीणसत्तू राया जवणिगं-
नरियं धारिणि देवि ठवेइ । ठवेत्ता पुप्फफलपडिपुन्नहत्थे
परेणं विनएणं ते सुमिणपाढए एवं वदासी—एवं खलु देवा-
णुप्पिया ! धारिणी देवी अज्ज तंसि नारिसयंसि सयणिज्जंसि

जाव महासुमिणं पासित्ताणं पडिवुद्धा । तं एयस्स णं देवाणु-
प्पियां ! उरालस्स जाव सस्सिरीयस्स महासुमिणस्स के मन्ने
कल्लाणे फलवित्तिविसेसे भविससइ ? ॥ ३० ॥

भावार्थ— पश्चान् अदीनजत्रु राजाने पदे के अन्दर धारिणी
महारानी को बैठाया । बैठानर फल फूल हाथ में लेकर, विनयपूर्वक, उन
स्वप्नों से इस प्रकार कहने लगा—भो देवानुप्रिय ! आज उस पहले वर्णन
की मुझे ज्यथा पर सोते समय गमिणी महारानी (यात्रतु) महास्वप्न देखकर
उठी है । भो देवानुप्रिय ! इस महान् उदाग और मन्त्रीक स्वप्न का क्या
मंगलमय फल होगा ? ॥ ३० ॥

मूलम्— तते णं ते सुमिणपाढगा अदीणसत्तुस्स रण्णो
अंतिए एयमट्ठं सांचा निसम्म इट्ठतुट्ठ जावहियथा तं सुमिणं
सम्मं ओगिण्हंति, ओगिण्हत्ता ईहं अणुपविसंति, अणुप-
विसित्ता अन्नमन्नेण मद्धि संचालेति, संचालित्ता तस्स
सुमिणस्स लद्धट्ठा गहियट्ठा पुच्छियट्ठा विणिच्छियट्ठा अभि-
गयट्ठा अदीणसत्तुस्स रत्तो पुरओ सुमिणसत्थाइं उच्चारमाणे
उच्चारमाणे एदं वदामी— एदं खलु अस्सं सामी ! सुमिण-
सत्थंसि कायालीसं सुमिणा नीसं महासुमिणा अदत्तरि
सव्वसुमिणा दिट्ठा । तत्थ णं सामी ! अरिहंतमायरो वा
चक्कवट्टिमायरो वा अरिहंतंसि वा चक्कवट्टिसि वा गव्भं
वक्कममागंसि एएसि नीसाण महासुमिणाणं इमे चउहस-
महासुमिणे पासित्ता णं पडिवुज्जंति
तं जहा—

गयउसभसाहअभिसेयदामससिदिणयरं झयं कुंभं ।

पउमसरसागरविमाणभवणरयणुच्चयसिहि च ॥ १ ॥

वासुदेवनायरो वा वासुदेवंसि गव्भं वक्कममागंसि एएसि

चउद्दसण्हं महासुमिणाणं अन्नघरे सत्तमहासुमिणे पासित्ता णं पडिवुज्झंति । वलदेवमायरो वा वलदेवंसि गवभं वक्कममाणंसि एएसि चउद्दसण्हं महासुमिणाणं अन्नघरे चत्तारि महासुमिणे पासित्ता णं पडिवुज्झंति । मंडलियमायरो वा मंडलियंसि गवभं वक्कममाणंसि एएसि चउद्दसण्हं महासुमिणाणं अन्नघरं एगं महासुमिणं पासित्ता णं पडिवुज्झंति । इमे य णं सामी ! धारिणीए देवीए एगे महासुमिणे दिट्ठे, तं उराले णं सामी ! धारिणीए देवीए सुमिणे दिट्ठे, जाव आरोग्गतुट्ठिदीहाउकल्लाणमंगल्लकारेणं सामी ! धारिणीए देवीए सुमिणे दिट्ठे, अत्थलाभो सामी ! सोक्खलाभो सामी ! भोगलाभो सामी ! पुत्तलाभो रज्जलाभो, एवं खलु सामी ! धारिणी देवी नवण्हं मासाणं बहुपडिपुत्ताणं जाव दारगं पयाहिसि ॥ ३१ ॥

भावार्थ— स्वप्नशास्त्री अदीनशत्रु राजा से इस विषय को सुनकर, हृदय में धारण करके संतुष्ट हुए । हृदय हर्ष से भर गया । उन्होंने उस स्वप्न का अवग्रह किया । अग्रग्रह करके स्वयं ईहा-विचार करने लगे । ईहा करके आपसमें चर्चा करने लगे । चर्चा करनेसे जब उसका फल मालूम होगया, ग्रहीत होगया, आपस में पूछनाछ करने से निश्चित होगया, विनिश्चित होगया और पूर्ण निश्चित होगया, तब वे राजा अदीनशत्रु के साम्हने शास्त्रों के वाच्य उच्चारण कर करके बोले— स्वामिन् ! हमने स्वप्न-शास्त्र में सब बृहत्तर स्वप्न देखे हैं— बयालीस साधारण और तीस महान् स्वप्न । हे राजन् ! इनमें से जब अर्हन्त और चक्रवर्ती अपनी माताके गर्भ में आते हैं, तब उनकी माताएँ इन तीस महास्वप्नों में से चौदह महास्वप्न देखकर जागती हैं । वे चौदह स्वप्न इस प्रकार हैं— हाथी १ बैल २ सिंह ३ लक्ष्मी का अभिषेक ४ फूलों की माला ५ चन्द्रमा ६

सूज ७ ध्वजा ८ कलश ९ जमल सहित सरोवर १० समुद्र ११ वैमानिक देवों का विमान या भयनपति देवों का भवन १२ रत्नों की राशि और १४ अग्नि की ज्वाला ।

जब वासुदेव गर्भमें आते हैं, तब उनकी माताएँ, इन चौदह महास्वप्नों में से कोई सान महास्वप्न देखकर जागती हैं । जब बलदेव गर्भ में आते हैं, तब उनकी माताएँ इन चौदह महास्वप्नों में से कोई चार सपने देखकर जागती हैं । जब माटलिकाराजा गर्भमें आते हैं, तब उनकी माताएँ इन चौदह स्वप्नों में से एक स्वप्न देखकर जागती हैं । इन स्वप्नों में से धारिणी महागानी ने एक महान् स्वप्न देखा है । वह स्वप्न उदार है । हे स्वामिन् ! (यावत्) आगोय सन्तोष दीर्घांशु कन्याया और मंगलकारि स्वप्न धारिणी देवी ने देखा है । स्वामिन् ! अर्थ- लाभ होगा, मुख-लाभ होगा, भोग-लाभ होगा, पुत्र-लाभ होगा और गज्य-लाभ होगा । हे स्वामिन् ! इस तरह धारिणी महागानी पूरे नव महीने बीत जाने पर (यावत्) पुत्र का प्रसव करेगी ॥ ३१ ॥

मूलम्— से वि य गां दारए उम्मुक्कवालभावे विना-
यपरिणयमित्ते जोव्वणगमणुप्पत्ते सुरे चारे विक्कन्ते वित्थि-
न्नविपुलघलवाहणे रज्जवई राजा भविस्सह अणगारे वा भावि-
यप्पा ,नं उराले गां सामी! धारिणीए देवीए सुमिणे दिट्ठे, जाव
आरोगगतुट्ठि जाव दिट्ठेत्ति कट्ठु भुज्जो भुज्जो अणुवूहंति ।
तते गां अदीणसत्तू राया तेसिं सुमिणपाढगाणं अंतिए एय-
मट्ठं सोचा निसम्म हट्ठतुट्ठ जाव हियए करयल जाव एवं व-
दासी-एयमेयं देवाणुप्पिया! जाव जणुणं तुव्वे वदहत्ति कट्ठु, तं
सुमिणं सम्मं पडिच्छति, पडिच्छिता ते सुमिणपाढए वि-
पुलेणं असणपाणखाहमसाहमेणं वत्थगंधमल्लालंकारेणा य स-
क्कारेति सम्माणेति, सक्कारेत्ता सम्मायेत्ता विपुलं जी-

वियारिहं पीतिदाणं दलयति , दलइत्ता पडिविसज्जेह । तते
 णं सेअदीणसत्तू राया सीहासणाओ अब्भुट्टेति, अब्भुट्टित्ता
 जेणेव धारिणी देवी तेणेव उवागच्छति, उवागच्छित्ता धा-
 रिणीदेवि एवं वयासी-एवं खलु देवाणुप्पिए! सुमिणास्तथंसि
 वायालीसं सुमिणा तीसं महासुमिणा जाव एगं महासुमिणं
 जाव भुज्जो भुज्जो अणुवूहति ॥ ३२ ॥

भावार्थ— स्वामिन् । वह बालक बाल्यावस्था का त्याग कर क-
 लाओ का ज्ञाता होगा । यौवन मे प्रवेश करके दानी वीर विक्रमयान् सेना
 और वाहन आदि का बढ़ाने वाला, राज्य का स्वामी राजा होगा । अथवा
 आत्मा मे लीन होनेवाला मुनि होगा । इस प्रकार का उत्तम स्वप्न धारिणी
 देवी ने देखा है । इस स्वप्न के देखने से (यावत्) आरोग्य होगा, सन्तोष
 होगा, इस प्रकार स्वप्न लोग बारबार कहने लगे ।

अदीनशत्रु राजा स्वप्नों से यह फल मुनकर और हृदय में धारणकर
 (यावत्) हर्षित और सन्तुष्ट हुआ । (यावत्) हाथ जोड़कर इस प्रकार बोला,
 हे देवानुप्रिय ! यह ऐसा ही है, आप लोगों ने स्वप्न का जो फल कहा
 है, वह मैंने अच्छी तरह समझ लिया है । समझकर उन स्वप्न शास्त्रियों
 को बहुत सा अशन पान खाद्य स्वाद्य और वस्त्र सुगन्धित मालाओं तथा
 अलङ्कारों से सत्कार किया, सन्मान किया । सत्कार और सन्मान करके
 आजीविका के योग्य प्रीति पूर्वक दान दिया । दान देकर उन्हें अपने अपने
 घर विदा किए । पश्चान् अदीनशत्रु राजा सिंहासन से उठा । उठकर धारिणी
 देवी के पास आया । आकर इस प्रकार बोला— हे देवानुप्रिये ! स्वप्न
 शास्त्र में बयालीस साधारण स्वप्न और तीस महास्वप्न है । (यावत्) उन में
 से तुमने एक स्वप्न देखा है । ऐसा बार बार कहने लगा ॥ ३२ ॥

मूलम्— तते णं सा धारिणी देवी अदीणसत्तुस्तरण्णो
 अंतिए एयमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ट जाव हियथा तं सुमिणं सम्मं

पडिच्छद्, पडिच्छत्ता जेणेव सए वासवरे तेणेव उवागच्छद्, उवागच्छत्ता सयं भवणमराणुप्पदिट्ठा । तए णं सा धारिणी देवी ण्हाया कययलिकम्मा जाव सव्वालंकारविभृत्तिया तं गव्भं णातिसीतेहि नानिउण्हेहि नातिनित्तेहि नातिकडुएहि नातिकसाएहि नानिअंधिलेहि नातिमहुंहेहि उउभयमाणमुहेहि भोयणच्छावणगंधमल्लेहि जं तस्स गव्भस्स हितं मियं पत्थं गव्भपोसणं तं देसे य काले य आहारमाहारेमाणी विवित्तमउएहि मयणासणेहि पतिरिक्कसुहाए मणाणुकूलाए विहारभूनीए पसत्थदोहला संमुत्तदोहला संमाणियदोहला अविमाणियदोहला ओच्छिन्नदोहला ववर्गीयदोहला ववगय-रोगमोहभयपरित्तासा तं गव्भं सुहंसुहेणं परिवहति ॥३३॥

भावार्थ— तत्पश्चात् वह धारिणी महागनी अर्दानशत्रु राजा से उन विषय को सुनकर बहुत ही मन्तुष्ट हुई । स्वप्न को अच्छी तरह समझकर जिवर निवान- गृह या, उवा चर्छा गई । जाकर अपने गृह में घुम गई । वहा जाकर स्नान किया, पुजायी (यवत्) सर्व अलकारों को वायव किया । न अधिक शीत, न अधिक उष्ण, न अधिक तीखे, न अधिक कडुवे, न अधिक कसायले, न अधिक खट्टे न अधिक मोठे. अर्थात् शत्रु के अनुसार खाने ओढने और सुगन्धित मान्दाओं का— जो कि गर्भ के लिए हित मित और पथ्य थीं और गर्भ को पुष्ट करने वाली थीं— देव काल के अनुसार आहार और उपयोग करने लगी । एकान्त और कोमल शय्या तथा आसनो द्वारा वचनागोचर मुख मिलने से, उच्छानुकुष्ठ घूमने की जगह होने से, उसे उत्तम इच्छा उत्पन्न हुई । वह पूरी हुई और उच्छानुकून भोग मिलने पर लेशनात्र भी अग्रणी न रही, तत्र दृग् हो गई, अत एव वह उच्छा

रहित हुई, रोग मोह और भय रहित होगई । इस तरह वह सुखपूर्वक गर्भ को धारण करने लगी ॥ ३३ ॥

मूलम्— तते णं सा धारिणी देवी नवण्हं मासाणं बहुपडिपुत्ताणं अद्दट्टमाणराइंदियाणं वीतिकंतताणं सुकुमालपाणिपायं अदीनपडिपुत्तपंचिदियसरीरं लक्खणवज्जणगुणाववेयं जाव ससिसोमाकारं कंतं पियदंसणं सुखं दारगं पयाया । तए णं तीसे धारिणीए देवीए अंगपडियारियाओ धारिणि देविं पस्रयं जाणेत्ता जेणेव अदीणसत्तू राथा तेणेव उवागच्छंति । उवागच्छित्ता करयलपडिगहियं जाव अदीणसत्तुं रायं जएणं विजएणं कद्धावेति । जएणं विजएणं बद्धावेत्ता एवं वदासी— एवं खलु देवाणुप्पिया ! धारिणी देवी नवण्हं मासाणं बहुपडिपुत्ताणं जाव दारगं पयाया । तं एयणं देवाणुप्पियाणं पियट्टयाए पियं निवेदेमो । पियं भे भवतु! तए णं से अदीनसत्तू राथा अंगपडियारियाणं अंतिए एयमट्टं सोच्चा निसम्म हट्टुट्ट जाव धाराहयणीव जाव रोमकूवे तासि अंगपडियारियाणं मडडवळ्ळं जहामालियं आंमोयं दलयति, दलइत्ता से तं रययामयं विमलसलिलपुत्तं भिगारं य गिणहति । गिणहत्ता मत्थए धोवड । धोवित्ता विउलं जीवियारिहं पीत्तिदाणं दलयति । दलइत्ता सक्कारंति सस्माणेति ॥३४॥

भावार्थ— पश्चात् नव महीने और साढे सात दिन अर्थात् सवा नौ महीने पूरे होने पर धारिणी देवी ने सुकोमल हाथ पैर वाले, सुढील और पूर्ण पंचेन्द्रियशरीर वाले, लक्षण और तिलक आदि चिन्हों से युक्त (यावत्) चन्द्रमा की तरह सौम्य, कान्त, देखने में सुन्दर, और सुरूप वाले बालक को जन्म दिया । धारिणी देवी की परिचारिकाएं उसे प्रसूता जानकर अदीनशत्रु राजा की ओर चलीं । जाकर हाथ जोडकर 'जय हो,

विजय हो, कहकर बचाई दी। बचाई देकर बोली—“हे देवानुप्रिय! पूरे नव महीने बीत जानेपर धारिणी देवीने पुत्र का प्रसव किया है। हे देवानुप्रिय! आप की प्रीति के लिए यह प्रिय निवेदन (मृचना) किया है। आप को प्रिय हो”। राजा अदीनजत्रु, अगमेविकाश्री से यह बात सुनकर श्री दृश्य में बग्कर (यावत्) धर्म और नन्तुष्ट हुआ। ऐसा रो-माञ्चित हा गया, जैसे कदम पर जलवाग पड़ने से रोम उठ आण हों। वह जो आभूषण पहिने था, मुकुटके निवाय सब दामियो को दे दिये। दान देकर चादी के बने हुए सफेद, और जलने से हुए भुगा (भारी) को उठाया। उठाकर दामियों का सिं धोया, सिं धोकर आनीविज्ञा के योग्य त्रिपुल प्रीति-दान दिया, प्रीतिदान देकर मत्कार किया नन्मान किया ॥ ३४ ॥

शूलम— सकारेत्ता सम्माणेत्ता * पडिविसञ्जेति । नते गं से अदीणसत्तू गया कोटुंविषयपुरिसे सदावेद, सदावेत्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भोः देवाणुप्पिया! हत्थिसीसे नगरं आसित्त जाव परिगयं करेह, करेत्ता चारगपरिसोहणं करेह करेत्ता माणुम्माणवद्वगं करेह, करेत्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिण्ह, जाव पच्चप्पिण्णत्ति । नते णं से अदीणसत्तू गया अट्टार-स सेणिप्पसेणीओ सदावेद, सदावेत्ता एवं वयासी-गच्छह णं तुभे देवाणुप्पिया ! हत्थिसीसे नगरं अविंभनरवाहिरिए उस्सुक्कं उक्करं अभडप्पवेसं अडंडिमं कूडंडिमं अधरिमं आधरणिञ्ज अणुद्वयमुडंगं अमिलायमल्लदामं गणियावर-नाडहञ्जकलियं अणेगतालापराणुचरियं पनुडयपछीलिया-भिरामं जहारिहं टिह्वडियं ठसदिवसिय करेह । करेत्ता एयमाणत्तियं पच्चप्पिण्ह । ते वि करंति, करेत्ता नहेव पच्चप्पिण्णत्ति ॥ ३५ ॥

भावार्थ— सत्कार और सन्मान करके उन्हें (दासियों को) विदा किया । तदनन्तर राजा अदीनशत्रु ने सेवकों को बुलवाया, बुलवाकर बोले— हे देवानुप्रिय ! हस्तिशीर्ष, नगर को शीघ्र साफ कराओ, और (यावत्) छिड़काव कराओ । सफाई करा कर कैदियों को छोड़ा दो । छोड़ा कर वजारभाव सस्ता करो । सन्ताकरके मुझे सूचित करो । सेवकों ने यह सब कार्य समाप्त करके राजा को सूचित कर दिया । पश्चात् अदीनशत्रु महाराज ने कुम्हार आदि अठारह जातियों और अठारह उपजातियों को बुलवाया । बुलवाकर बोले— हस्तिशीर्ष, नगर के बाहर और नगर में जाकर ऐसा (प्रवन्ध) करो कि कोई दश दिन पर्यन्त चुगी न ले, कर आदि न ले, राजा का कोई मनुष्य जनता को सन्ताप न दे, कोई अपराध का उचित या कम दण्ड नहीं देने पावे, अर्थात् अपराध का कुछ भी दण्ड न दिया जाय । कोई ऋण का तगाटा न करे । कोई धरना देकर न बैठे । दूसरी जगह मृदंग आदि नाजे न नजाने पावे, तथा नगरको ताजी फूलमालाओंसे शोभमान करो । उत्तम गणिकाओं का नाच कराओ । बहुत से तालाचरों (नाटककारों) से नाटक कराओ । प्रमोद और क्रीडा करने वालों से नगर सुशोभित करो । इसके सिवाय पुत्रजन्म सम्बन्धी कुल की मर्यादा के अनुसार दश दिन तक और २ कार्य कराओ, कराकर हमें सूचित करो । उन छत्तीस श्रेणियों के लोगों ने भी सब कार्य करके महाराज को खबर दी ॥ ३५ ॥

मूलम्— तते ण से अदीणसत्तू राया वाहिरियाए उवट्टाणसालाए सीहासणवरगए पुरत्थाभिमुहे सन्निसन्ने सइएहि य साहस्सिएहि य सयसाहस्सिएहि य जाएहि दाएहि भोगेहि दलमाणे दलमाणे पडिच्छेमाणे पंडिच्छेमाणे एवं च णं विहरति । तते णं तस्स अम्मापियरो पढसे दिवसे जातकम्मं करेन्ति, करेत्ता वित्तिए दिवसे जागरियं करेन्ति, करेत्ता तत्तियदिवसे चंदसूरदंसणियं करेन्ति, करेत्ता एवा-

मेव निव्वत्ते सुडजातकम्मकरणे संपत्ते चारसाहे दिवसे विपुलं असणं पाणं खाडमं साडमं उवक्खडावेत्ति, उवक्खडावेत्ता मित्तणाडनियगसयणासंबंधिपरिजणं वलं च चह्वे गणणायगदंडनायग जाव आमतेत्ति ततो पच्छा ण्हाया कयवलिकम्मा कयकोउय जाव मच्चालंकारविभृसिया महन्तिमहालयंसि भोयणमंडवंसि तं विपुलं असणं पाणं खाडमं साडमं मित्तणाडनियगसयणसंबंधि परिणण जाव सद्धि आसाएमाणा विमाएमाणा परिभाएमाणा परिभुंजेमाणा एवं च णं विहरंति ॥ ३६ ॥

भावार्थ— पश्चात् अतीन्द्रात् राजा बाह्य को स्वामि पूर्वदिशा को ओग मुह करके निगमन पर विगजे। देवपूजा के लिए प्रौढ आहार कृप्य आदि दान के लिए मंडपों हजारों लोगों द्रव्यों का दान दिया। तदनन्तर उम बालक के माता पिता ने पहिले दिन जातकर्म (जन्म के समय की क्रियाएँ) किया। दूसरे दिन त्रिजागरण किया, आग तीसरे दिन चन्द्रमा और सूर्य के दर्शन के लिए उन्मय किया। छठे दिन जागरण किया। इन कार्यों में निवृत्त होकर शुचि जातकर्म करनेपर बाह्यों दिन वदुत्तसा अशन, पान, स्नाय और स्वाय भोजन ब्रामय। ओ मित्र जाति (माता पिता भाई जंगेह) निजा (पुत्रादि) मयजन (पिता के मन्वन्ती काका - वगैरह) सम्बन्धी (मसुग आदि) परिजन, मेना प्रौढ ब्रह्म में गणनायक, दण्डनायक आदि को (यावत्) आमन्त्रण दिलवाया। तत्पश्चात् स्नान किया। गृह-देवता की पूजा की। और कौतुक (तिचक आदि मगलिक-चिन्ह) किया। नमन्त अलकारों में विश्रुपित हुआ, तथा वडे भागे ग्लोडे में जाकर मित्र, जाति (यावत्) गरणायकों के साथ अशन पान खाद्य और स्वाय पदार्थों का स्वाद लिया। विशेष स्वाद लिया। दूसरों को बौटा और उपभोग किया। अर्थात् जिनमें बौटा व्यर्थ जाय ज्यादा खाया जाय,

ज्यादः व्यर्थ जाय थोडा खाया जाय, पूरा खा लिया जाय, इस प्रकार के आहारों को प्रीति पूर्वक ग्रहण करने लगे ॥ ३६ ॥

मूलम्— जिमियभुत्तुत्तरागया वि य णं समाणा आ-
 यंता चोक्खा परमसुःखभूया तं मित्तनातिनियगसयणसंबंधि-
 परिणगणनायग० विपुलेणं पुष्पवत्थगंधम्मल्लालंकारेणं
 सक्कारेति सम्माणेति, सक्कारेत्ता सम्माणेत्ता एवं वयासी-
 अम्हं इमस्स दारगस्स नामेणं सुवाहुकुमारे , तस्स
 दारगस्स अम्मापियरो अयमेयारूवं गाणं गुणणिप्फन्नं
 णामधेज्ज करेति सुवाहुत्ति, तते णं से सुवाहुकुमारे पंच-
 धाई परिगगहिए तंजहा- खीरधाईए मंडणधाईए मज्जणधाईए
 कीलावणधाईए अंकधाईए अन्नाहिय धहूहि खुज्जाहि चित्ता-
 हयाहि वामणिवडभिवच्चगीयडसिजांणिघपल्हविणईसि-
 णियाचाधोरुगिणिलासियलउसियदमिलिसिहलिआरविपु-
 लिंदिपक्कणिवहलिमुसंडिसवरिपारसीहि णाणादेसीहि वि-
 देसपरिमंडियाहि इंगितचित्तिपत्थियवियाणियाहि सदेसणे-
 वत्थगहितवेसाहि निउणकुसलाहि विणीयाहि चेडियाचक्क-
 वालवरिसधरकंचुड्जमहयरगवंदपरिक्खित्ते हत्थाओ हत्थं
 साहरिज्जमाणे अंकाओ अंकं परिमुज्जमाणे परिगिज्जमाणे
 चालिज्जमाणे उवलालिज्जमाणे रम्मंसि मणिकोटिमतलंसि
 परिमिज्जमाणे परिमिज्जमाणे णिब्वायणिब्वाघायंसि गिरि-
 कंदरमल्लीणेव चंपगपायवे सुहंसुहेणं वड्डइ ॥३७॥

भावार्थ— भोजन करने के पचात् राजा और रानी सिंहासन पर विराजे । विराज कर निर्मल जल से परम पवित्र होकर, मित्र, ज्ञाति, निजी स्वजन, सम्बन्धी, परिजन और गणनायकों का फूल, वस्त्र सुगन्धित माला और अलंकारों से सत्कार और सन्मान लिया । सत्कार और

नन्मान करके बोने— हमने डम बालक का गुण नियंत्रण सुवाहुकुमार' यह नाम रखा है । तदन्तर सुवाहुकुमार को पाच भागों ने प्ररग किया । वे डम प्रकार हैं— १ दूध पिलाने वाली, २ शृणा कराने वाली, ३ स्नान कराने वाली, ४ खेल कराने वाली, ५ गोद में गिराने और पलने में झुटाने वाली तथा और ना अनेक टेटो जाय वाली चिन्तान देश की, बीना शरीर वाली, बटे पेट वाली, बर्ग देश का बकुल देशकी, योनक (जोगिय) देश की, पन्थ देश की, टमिनिक देश की, योनिक देश की, लानक देश की, ललुनिक देश की, ट्रिप देश की, मिहल देश की, अग्देशकी, पुलिदेशकी, पङ्गुदेशकी, बहलदेशकी, मुन्टदेशकी शर देश की, करम देश की इत्यादि बहुत से अनर्य देशों की स्पदेश और पदेश से प्राप्त होने वाली, चेश से अभिप्राय को जानने वाली इगारे मे मन मे मोचे ट्ट को जानने वाली, बचन मे न करने पर भी आय-रकता को मनको जाये, अने २ देश का बेश पहनने वाली, बहुत ही चतुर और विनत, दानियों के समूह और कचुकी (गनयानके ग्यवाले) तथा अत पुग वी गक्षा का चिन्ता करनेवालों से विग हुआ हाथो हाथ रहने लगा । यह एक जी गोद से दूसरे की गोद में जाता, टासिया गाना सुनानी, झुलती और प्यार करती थी । उन प्रकार अनि रमणीय मयियों से विभूषित आगन में अनेक प्रकार के आनन्द कराना हुआ बाधा रहित होकर सेटना हुआ सुवाहुकुमार पर्यन के मंठप में रहने वाले चम्भक वृद्ध के समान सुख मे बढने लगा ॥३७॥

मूलम्—+ तण णं तस्म सुवाहुस्म दारगस्स अम्मा-
पियरो अणुपुञ्जेणं टिनिवडियं वा चंडसूरदंसावणियं वा
जागरियं वा नामकरणं वा परंगामणं वा पयचंक्रमणं वा जे-
सामणं वा पिंडवद्धणं वा पजंपावणं वा कणवेहरणं वा

संवच्छरपडिलेहणं वा चोलोयणगं वा उवणयणं वा अण्णा-
णिय वट्टणि गवभाधाणजम्मणमादियाडं कोउयाइं करंति ।
* तते णं तं सुवाहुकुमारं अम्मापियरो सातिरेगअट्टवास-
जातगं चेव गवभट्टमे वासे सोहणंसि तिहिकरणमुहुत्तंसि
कलायरियस्स उवणंति । तते णं से कलायरिए सुवाहुकुमारं
लेहाइयाओ गणियप्पहाणाओ सउणरुयपज्जवसाणाओ धा-
वत्तरिं कलाओ सुत्तओ य अत्थओ य करणाओ य सेहा-
वेति सिक्खावेति ॥३८॥ तं जहा—

भावार्थ— तत्पश्चात् उम सुवाहुकुमार बालक के माता पिता ,
का से स्थित पतित (पुत्र जन्म का उत्सव विशेष) यावत् चन्द्रसूर्यद-
र्शन गत्रिजागरेण, नामकरण, घुटनों से चलना, पैरों के बउ खडे करना,
भोजन करना, प्रास का बढ़ाना, उच्चारण करवाना, कानों का छिड़ाना,
वर्षगाठ मनाना, चोटी रखाना, उपनयन सस्कार (बला ग्रहण करवाना)
आदि अनेक गर्भावान और जन्म आदिके कौतुक करने लगे । इस प्रकार
त्रय आठ वर्ष और कुछ दिन बीत गए, तब सुवाहुकुमार के माता पिताने
उसे शुभतिथि शुभकरण और शुभमुहूर्त मे कलाचार्य (पण्डितजी)
को सौंप दिया । सापने के अनन्तर पण्डितजी ने सुवाहुकुमार को लिखना,
गणित से लेकर पक्षी आदिके बोलनेका शकुन ज्ञान तक बहत्तर कलाएँ, सूत्र अर्थ
(व्याख्यान) और करण (प्रयोग) द्वारा सिखाई ॥३८॥ वे निम्न प्रकार है—

मूलम्— तंजहा—लेहं गणियं ख्वं णटं गीयं वाइयं
सरम(ग)यं पोक्खरगयं समतालं जूयं १०, जणवायं पासयं
अट्टावयं पोरेक (व) चं दग्गमट्टियं अन्नविहि पाणविहि वत्थ-
विहि विलेवणविहि सयणविहि २०, अज्जं पहेलियं मागहियं
गाहं गीतियं सिलोयं हिरण्णजुत्ति सुवण्णजुत्ति चुन्नजुत्ति

आभरणविहिं ३०, तरुणीपडिकम्मंडवियलकखणं पुरिमल-
 कखणं हयलकखणं गयलकखणं गोणलकखणं कुक्कुडल-
 कखणं द्रुत्तलकखणं डंडलकखणं असिलकखणं ४०,
 मणिलकखणं कागणिलकखणं वन्थुविज्जं खंधारमाणं नगर-
 माणं वृहं पडिवृहं चारं पडिचारं चक्रवृहं ५०, गरुलवृहं
 मगडवृहं जुद्धं णिजुद्धं जुद्धानिजुद्धं अट्टिजुद्धं मुट्टिजुद्धं बाहु-
 जुद्धं लयाजुद्धं ईसन्थं ६०, दुरप्पवायं धणुव्वेयं हिरन्नपागं
 सुवन्नपागं सुत्तखेट्टं वट्टिखेट्टं नालियाखेट्टं पत्तच्छेज्जं कटच्छे-
 ज्जं मज्जीवं ७०, निज्जीवं मडणरुयमिति ॥ ३० ॥

भावार्थ— १ अक्षर लिपि की कला २ गणितकला ३ रूपकला
 (चित्रकारी) ४ नाटक करने की कला ५ गानकला ६ वाजेबजाने का
 ज्ञान ७ स्वर के आलाप का विधान ८ मर्दन वादन कला ९ समता
 बनाना १० जुआ खेलने का ज्ञान ११ जनवाद (वादविवाद करना) १२
 पामा खेलने का ज्ञान १३ शतरंज या चौपड खेलने का ज्ञान १४
 प्रायः नगर आदि की रक्षा करना १५ जल और मिट्टी के मयोग में बनने
 वाली पस्तुओं का ज्ञान १६ अन्न पकाने की कला १७ जल के स—
 स्कार करने की कला १८ वस्त्र नम्बन्धी सब तरह का ज्ञान १९ शरीर पर
 तेल आदि का मर्दन— लेप करने का ज्ञान २० शयन का ज्ञान २१
 आर्या दंड में रचना करने का ज्ञान २२ पहली बनाने की कला २३ मागधी
 भाषा की कविता बनाने का ज्ञान २४ गाथा रचना करने का ज्ञान २५
 गीत बनाने का ज्ञान २६ श्लोक बनाने का ज्ञान २७ चाटी बनाने की विधि
 का ज्ञान २८ मुवर्ण बनाने की विधि का ज्ञान २९ चूर्ण (अर्वा आदि)
 बनाने का ज्ञान ३० आभूषण घटने का ज्ञान ३१ तरंग स्त्री का शृंगार
 नम्बन्धी ज्ञान ३२ स्त्रियों के लक्षणों का ज्ञान ३३ पुरुषों के लक्षणों का
 ज्ञान ३४ घोड़ों के लक्षणों का ज्ञान ३५ हाथियों के लक्षणों का ज्ञान

३६ गाय बैल के लक्षणों का ज्ञान ३७ मुंगों के लक्षणों का ज्ञान ३८ छत्र के लक्षण का ज्ञान ३९ बास आदि के दलों के लक्षण का ज्ञान ४० तलवार के लक्षण का ज्ञान ४१ काकणी (व्याघ्री हसी आदि) के लक्षण का ज्ञान ४२ मणियों के लक्षण का ज्ञान ४३ वारतु शास्त्र (घर आदि बनाने की विधि) का ज्ञान ४४ अश्वहिणी आदि सेना के निर्माण (रचना) करने की कला ४५ नगर बसाने के परिमाण का ज्ञान ४६ व्यूह रचना करने का ज्ञान ४७ शत्रुसेना के व्यूह को भेदने की कला ४८ सेना का संचार करने का ज्ञान ४९ विरोधी सेना के विरुद्ध सेना संचार करने का ज्ञान ५० चक्र के आकार की व्यूह-रचना करने का ज्ञान ५१ गरुडाकार व्यूह-रचना करने का ज्ञान ५२ ञ्जकट (गाडी) के आकार व्यूह रचना करने का ज्ञान ५३ सप्राम (युद्ध) करने का ज्ञान ५४ विशेष युद्ध करने का ज्ञान ५५ धावा मागकर वीर सप्राम करने का ज्ञान ५६ अस्थि (हड्डी) से युद्ध करने का ज्ञान ५७ मुष्टि (मुट्टियों से) युद्ध करने का ज्ञान ५८ बाहु-युद्ध करने का ज्ञान ५९ लतायुद्ध करने का ज्ञान ६० बाण शास्त्र का ज्ञान अथवा थोड़ी चीज को बहुत और बहुत को थोड़ी दिखाने की कला ६१ खुपे सरीखे शस्त्र चलाने का ज्ञान ६२ धनुर्विद्या का ज्ञान ६३ हिरण्यपाक (चादी शुद्ध करने) का ज्ञान ६४ सुवर्णपाक (मोना शुद्ध करने) का ज्ञान ६५ सूत्रछेदन कला ६६ प्रन्थिखेट कला ६७ कमल के दल को भेदने की कला ६८ पत्तों को छेदने की कला ६९ कट (चटाई) के समान वस्तुओं को छेदने का ज्ञान ७० मरे हुए को मत्र से जिन्दा करने का ज्ञान ७१ जिन्दे को मरा सा दिखाने की कला और ७२ पक्षियों का शब्द सुनकर शुभाशुभ फल का ज्ञान ॥ ३९ ॥

सूत्रम्— तते णं से कलायरिए सुवाहुं कुमारं लेहा-
 इयाओ गणियप्पहाणाओ सउणरूपज्जवसाणाओ वावत्तरि-
 कलाओ सुत्तओ य अत्थओ य करणओ य सेहावेति सिक्खा-

वेति, नेहावेत्ता सिक्खावेत्ता अम्मापिज्जेण उचणेइ । तने णं
 सुवाहुकुमारस्स अम्मापियरो नं कलायग्गियं महुरेहिं वयणेहिं
 विपुलेणं वन्थगंधमत्तलालंकारेणं सक्कारेन्ति सम्माणेन्ति ।
 मक्कारेत्ता सम्माणेत्ता विपुलं जांविगारिहं पीइदाणं दलयन्ति ।
 दलहत्ता पडिविसंज्जति । तने णं मे सुवाहुकुमारे वावत्तरिक-
 लापंडिण गवंगसुत्तपडियांदिण, अट्टारसविट्ठिप्पगारदेसीभा-
 साविसारण गीयरई गंधव्वनट्टकुमले ह्यजोही गयजोही
 रहजोही वाहुजोही वाहुप्पमही अलंभोगममन्थे साहमिण
 वियालचारी जाण याचि होन्था । तने णं तम्स सुवाहुकुमा-
 रस्स अम्मापियरो सुवाहुं कुमारे वावत्तरिकलापंडियं जाव
 विघालचारी जायं पासन्ति । पामित्ता पंचसयपामायवडंसेगे
 करेति, अब्भुग्गयमूसिय पट्टमिय विवे मणिकणगरयण भत्ति-
 चित्ते वाउद्धयविजयवेजयंतीपट्टागात्ताट्टत्तकलिण तुंगे
 गगणतलमभिलंबमाणसिहरे जालंनररयणपंजरुभिमिलियन्-
 वमणिकणगधृभियाण वियमियमयपत्तपुंडरीण निलयरयण-
 द्धचंदच्चिण णाणामणिमयदामालकिते अंतो यट्ठि च मण्हे,
 नवगिज्जभइलवाल्लुयापन्थरे सुट्टफामे सभिसिगयत्त्वे पासदीण
 दरिसणिजे अभिरुत्त्वे पडिरुत्त्वे, तेसिं णं पामाट्टवट्ठिसगाणं
 घट्टुमड्जदेसभागे एत्थ गा महेग भवणं करेन्ति, अणेग-
 खंभसयसन्नविट्ठं लीलट्टियसालभंजियागं अब्भुग्गयसुकय-
 षपरवेह्यातोरणं वररट्टयसालभंजियासुसिलिट्टविसिट्टलट्ट-
 संठियपसत्थवेरुलियखंभं णाणामणिकणगरयणस्वचियउ-
 ज्जलं वहुसमसुविभत्तनिचितरमणिज्जभूमिभागं ईहामिय-
 उसभतुरगणरमगरविट्टगवाल्लगकिण्णररुरुत्तर भवमरकुंजर-

षणलयपउमलयभत्तिचित्तं खंभुग्गयवयरवेइयापरिगघाभिरामं विज्जाहरजमलजुयलजुत्तं पि व अच्चिसहस्समालणीयं रूवगसहस्सकलियं भिसमाणं भिठिभसमाणं चक्खुल्लोयणलेसं सुह्फासं सस्सिरीयरूवं कंचणमणिरयणायुभियागं णाणाविहपंचवण्णघंटापडागपरिमंडियग्गसिहरं धवलमरीचिकवयं विणिम्मुयंनं लाउल्लोइयमहियं गोसीससरसरत्तचंदणदहरदिन्नपंचंगुलितलं उवचियचंदणकलसं चंदणघडसुकयत्तोरणपडिदुवारदेसभागं आसत्तोसत्तविउलवट्टवगघारियमल्लदामकलावं पंचवण्णसरससुरभिमुक्कपुप्फपुंजोवयारकलियं कालागरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूमघमघंतगंधुद्धुयाभिरामं सुगंधवरगंधियं गंधवट्टिभूयं पासादीयं दरिसणिज्जं अभिरूवं पडिरूवं ॥ ४० ॥

भावार्थ—कलाचार्य ने लिपि और गणित से लगाकर शकुनरत्न तरु बहत्तर कलाओं को सूत्र अर्थ और करण (प्रयोग) करके सुबाहुकुमार को सिखाया, और सिखाकर उसके माता पिता को वापस सोप दिया। सुबाहुकुमार के माता पिताने भी मयुर वचनो बहुत से वस्त्र फलमाला और आभूषणों से आचार्य का सत्कार-सन्मान किया। सत्कार सन्मान करके इतना दान दिया, कि वह उन के समस्त जीवन को पर्याप्त था। दान देकर उन्हें विदा किया। अथ सुबाहुकुमार बहत्तर कलाओं में कुशल हुआ। उसके २ कान २ नाक २ आंखें १ स्पर्शन इन्द्रिय १ जिह्वा और १ मन ये नौ अंग जाग से गए, अर्थात् विशिष्ट ज्ञानवाले हुए, अटाग्रह देश-भाषाओं में प्रवीण हुआ। गीतों का प्रेमी तथा गाने और नृत्य करने में प्रवीण हुआ। वोढ़े, हाथी और रथ द्वारा युद्ध करने वाला हुआ। बाहुयुद्ध करने वाला, भुजाओं को मर्दन करने वाला और पर्याप्त भोग भोगने में सशक्त हुआ। वह अपने साहस के

बन्धुपर अकाल मे ही विचरण करता था ।

सुत्राहुकुमार के माना पिता ने सुत्राहुकुमार को बहतर कलाओं मे प्रयोग (पावन) अकाल ही मे विचरण करने वाला जानकर पाचमौ उत्तम उत्तम महल बनवाए । वे महल बहुत ऊंचे थे और स्वच्छ प्रभा में ऐसे मालूम होते, मानो हँस रहे हैं । मणि, सुवर्ण, और रत्नों से रचित होने से अचम्भा पैदा करने थे । विजय की सूचना करने वाली वायु से हिलती हुई पताकाओं और पताकाओं के ऊपर की पताकाओं तथा द्वाज और द्वाजों के ऊपर के द्वाजों से युक्त थे । बहुत ऊंचे थे, अतः ऐसे मालूम होते थे, मानो उन के शिखर आकाशमल को लाय रहे हों । जालियों के मध्य-भाग मे अथवा गिडकियों मे लगे हुए रत्न चमकते थे । खम्भ, मणि और सुवर्ण से जड़े हुए थे । उन मे जनपद (नौ पत्ते वाले) कमल गिने हुए थे । तिलक रत्न और मोड़ियों से युक्त थे । नाना मणिमय मालाओं से शोभमान थे । भीतर बाहर से चिक्के थे । तपे हुए मोने की मुन्द्रा के बने हुए फर्शवाले महलों के आगम नडे भले मालूम होते थे । झूने मे शच्छे, मुन्द्रा रूपवाले चित्तको प्रमत्त करने वाले, दर्शनीय मनोहर और देखने वालों को भिन्नभिन्न रूप वाले मालूम होते थे । उन उत्तम महलोके बीचोबीच एक बड़ा भवन बनवाया, उसमें सैकड़ों खम्भ बने थे, जिसमे लीला करती हुई पुनलिया बनी हुई थीं । वज्रमय वेदिकाओं पर तोरण बने थे । तोरणों के ऊपर भी मुन्द्रा पुनलिया बनाई गई था । विशेष आकार वाले मुन्द्रा और स्वच्छ जड़े हुए वैड्य मणि के खम्भो पर पुनलियों बनी हुई थीं । अनेक मणि सुवर्ण रत्नोंसे वह भवन प्रकाशित था । वहाँ की भूमि समतल अच्छी तरह रची हुई और अनिजय रमणीय थी । उसमें भेटिया बेल बोडा मनुष्य मगर पक्षी सर्प किन्नर मृग अष्टापद चमरी गाय हाथी वनलता और पद्मलताओं के चित्र बने थे । खम्भो के ऊपर हीरे की बनी हुई वेदिकाओं से मनोहर था । एकही पक्ति मे विद्यावरों के

जोड़ोंकी चलती फिरती प्रतिमाएँ बनी थीं । उसमे से हजारों किरणें निकल रही थीं । उस मे हजारों गग थे । देदीप्यमान था- अतिशय देदीप्यमान था । उसे देखते ही नेत्र उस में गड जाते थे । स्पर्श सुखकर, रूप मनोहर था । नीचे की भूमि सोना, मणि और रत्नों की बनी थी । उस का किम्बर अनेक तहरके पाचवर्ण वाले घगटा और पताकाओं से मडित था । सफेद किरण रूप कवच को धारण कर रहा था, निपा पुता था । धिसे हुए ताजे गोशीर्ष (मलियागिरि चदन) और रक्तचदनके छाये (हाथे) लगे हुए थे । दग्वाजे पर मागलिक कलश स्थापन किये गए थे । चन्दन लिप्त घट, तोरण और प्रतिद्वारों पर स्थापित किए थे । नीचे से ऊपर तक लम्बी चौड़ी फूलों की मालाएँ लटकी हुई थीं । पाच वर्णों के ताजे सुगन्धित फूलों के ढेर लगे थे । कृष्णागर चीड लोबान और दशापत्र की लहरोती हुई सुगन्ध से युक्त-उत्तमोत्तम सुगन्धि से सुगन्धित, अतएव गधकी गोली जैसा किया गया था । उस भवन को देखते ही त्रिच प्रसन्न हो जाता था । उसे देखने में नेत्रों को कुछ श्रम न पडता था, और देखने वाले को भिन्नभिन्न रूप दिखाई देते थे । मतलब यह कि- वह भवन अत्यन्त मनोहर था ॥४०॥

मूलम्—*तए णं तं सुबाहुकुमारं अम्मापियरो अन्न-
या कया वि सोभणंसि तिहिकरणदिवसनक्खत्तमुहुत्तंमि
पहायं कयवलिकम्मं कयकोउयमंगलपायच्छित्तं सव्वालंकार-
विभूसियं पमक्खणगणहाणगीयवाइयपसाहणट्ठंगतिलगकंक-
णअविह्ववहुउवणीयं मंगलसुजंपिण्हि य वरकोउयमंगलो-
वधारकयसंतिकम्मं सरिसियाणं सरित्तयाणं सरिव्वयाणं
सरिस्सलावन्नरूवजोव्वणगुणोव्वेयाणं सरिसंएहितो राय-

* भगवती शतक ११ उद्देशे ११ सूत्र ४३० प ४४६ पृ १ प १

१ ज्ञाता अ १ सू० २० पत्र ३९ पृ १ प ४६६ तक ।

कुलेहितो आणीठह्लियाणं पसाहणटुंगअविहववहुओत्रयणा-
मंगलसुजंपियाहि पुफ्फचलापामोकखाहि पंचसयाहि रायव-
रकणयाहि मिद्धि एगंदिवसेणं पाणि गिणहाविंसु । तने
णं तस्म सुवाहुस्स कुमारस्स अम्मापियरो अयमेयास्वं पी-
इदाणं दलयंति ।

तंजहा— पंचसयहिरगणकोडीओ पंचसयसुवन्नकोडी-
ओ पंचसयमउडे मउडप्पवरे पंचसयकुंडलजुण कुंडलजुयप्प-
वरे पंचसयहारे हारप्पवरे पणसयअद्धहारे अद्धहारप्पवरे
पणसयएगावलीओ एगावलिप्पवराओ एवं मुत्तावलीओ
एवं कणगावलीओ एव रयणावलीओ पंचसयकडगजोए
कडगजोयप्पवरे एवं तुडियजोए पणसयग्वोमजुवलाहं खो-
मजुवलप्पवराहं एवं वडगजुवलाहं एवं पट्टजुवलाहं एवं दु-
गुल्लजुवलाहं पणसयसिरीओ पणसयहिरीओ एवं धितीओ
कित्तीओ बुद्धीओ लच्छीओ पणसयनन्दाहं पणसयभहाहं
पणसयतले तलप्पवरे सच्चरयणामए णियगवरभवगाकेज.
पणसयज्जण ज्ञयप्पवरे पणसयवण वयप्पवरे दसगोसा-
हसिएणं वणं पणसयनाडगाहं नाडगप्पवराहं वत्तीमयट्ठेणं
नाडएणं पणसयआमे आसप्पवरे सच्चरयणामए सिरिघर-
पडिस्सवए पणसयहत्थी हत्थिप्पवरे सच्चरयणामए सिरिघर-
पडिस्सवए पणसयजाणाहं जाणाप्पवराहं पणसयजुग्गाहं
जुग्गप्पवराहं एवं सिवियाओ एवं संदमाणीओ एवंगिल्लीओ
धिल्लीओ पणसयवियडजाणाहं वियडजाणप्पवराहं पणस-
यरहं पारिजाणिण पणसयरहं संगामिण पणसयआसे आस-
प्पवरे पणसयहत्थी हत्थिप्पवरे पणसयगामे गामप्पवरे

दसकुलसाहसिएणं गामेणं पणसयदासे दासप्पचरे एवं चेव
दासीओ एवं किंकरे एवं कंचुइज्जे एवं वरिसधरे एवं महत्तरए
पणसयसोवन्निए ओलंबणदीवे पणसयरुप्पामए ओलंबण-
दीवे पणसयसुवन्नरुप्पामए ओलंबणदीवे पणसयसोवन्निए
उक्कंचणदीवे एवं चेव तिन्निवि, पणसयसोवन्निए पंजरदीवे
एवं चेव तिन्निवि, पणसयसोवन्निए थाले पणसयरुप्पामए थाले
पणसयसुवन्नरुप्पामए थाले पणसयसोवन्नियाओ पत्तीओ
पणसयरुप्पामयाओ पत्तीओ पणसयसुवन्नरुप्पामयाओ पत्ती-
ओ पणसयसोवन्नियाडं थासगाडं पणसयरुप्पामयाडं थासगा-
डं पणसयसुवन्नरुप्पामयाडं थासगाडं पणसयसोवन्नियाडं
मल्लगाडं पणसयरुप्पामयाडं मल्लगाडं पणसयसुवन्नरुप्पाम-
याडं मल्लगाडं पणसयसोवन्नियाओ तलियाओ पणसयरुप्पा-
मयाओ तलियाओ पणसयसुवन्नरुप्पामयाओ तलियाओ
पणसयसोवन्नियाओ कइवियाओ पणसयरुप्पामयाओ
कइवियाओ पणसयसुवन्नरुप्पामयाओ कइवियाओ पणसय-
सोवन्निए अवण्डए पणसयरुप्पामए अवण्डए पणसयसुवन्न-
रुप्पामए अवण्डए पणसयसोवणियाओ अवयक्काओ
पणसयरुप्पामयाओ अवयक्काओ पणसयसुवणरुप्पामयाओ
अवयक्काओ, पणसयसोवणिए पायपीढए पणसयरुप्पामए
पायपीढए पणसयसुवणरुप्पामए पायपीढए, पणसयसोव-
णियाओ भिसियाओ पणसयरुप्पामयाओ भिसियाओ
पणसयसुवणरुप्पामयाओ भिसियाओ पणसयसोवणि-
याओ करोडियाओ पणसयरुप्पामयाओ करोडियाओ
पणसयसुवणरुप्पामयाओ करोडियाओ, पणसयसोवणिए
पल्लंके, पणसयरुप्पामए पल्लंके पणसयसुवणरुप्पामए प-

ल्लंके, पणसयसोवणियाओ पडिसेज्जाओ पणसयरुप्पामया-
 ओ पडिसेज्जाओ पणसयसुवणणरुप्पामयाओ पडिसेज्जाओ,
 पणसयहंसासणाहं पणसयकोंचामणाहं एवं गम्लासणाहं उन्न-
 यासणाहं पणयासणाहं दीहासणाहं भहासणाहं पक्खासणाहं
 मगरासणाहं पणसयपउमासणाहं पणसयदिसासोवत्थियास-
 णाहं पणसयतेल्लसमुग्गे जहा रायपमेणिज्जे जाव पणसय-
 सरिसवसमुग्गे पणसयखुज्जाओ जहा उववाडण जाव पणस-
 यपारिसीओ पणसयउत्ते पणसयउत्तधारीओ चेडीओ पण-
 सयचामराओ पणसयचामरधारीओ चेडीओ पणसयनालि-
 यंदे पणसयनालियंदधारीओ चेडीओ पणसयकरोंडियाधारीओ
 चेडीओ पणसयचौरधार्इओ जाव पणसयअंकधार्इओ
 पणसयअंगमद्वियाओ पणसयउम्मद्वियाओ पणसयण्हावि-
 याओ पणसयपसाद्वियाओ पणसयवन्नगपेसीओ पणसय-
 चुन्नगपेसीओ पणसयकोडागारीओ पणसयदवकारीओ प-
 णसयउवन्थागियाओ पणसयनाडइज्जाओ पणसयकोहुंबि-
 णीओ पणसयमहाणसिणीओ पणसयभंडागारिणीओ पण-
 सयअड्धाधारिणीओ पणसयपुप्फधारिणीओ पणसयपाणि-
 अधारिणीओ पणसयवलिकारियाओ पणसयसेज्जाकारिया-
 ओ पणसयअभनरियाओ पडिहारीओ पणसययाहिरपडि-
 हारीओ पणसयमालाकारीओ पणसयपेसणकारीओ अपणं
 वा सुवहं हिरणं वा सुवणं वा कंसं वा दंसं वा विउलध-
 णकणगरयणमणिमोत्तियसंखसिलपवालरत्तरयणसंतसार-
 मावइजं अलाहि जाव आसत्तमाओ कुलवंसाओ पकामं
 दाउं पकामं परिभोत्तुं पकामं परिभाएउं ॥४१॥

भावार्थ— इसके बाद (सुबाहुकुमारके) माता पिताने शुभ तिथि शुभ करण शुभ दिन शुभ नक्षत्र और शुभ मुहूर्तमें सुबाहुकुमारको, जो कि स्नान कर चुका था । देव पूजा कर चुका था । मागलिक तिलक आदि किये हुए था । सब अलंकारों से भूषित था । मुहागिन स्त्रियों से मर्दन (मालिश) स्नान, गीत वादित्त मडन और आठों अंगों पर तिलक लगवाया तथा ककण बधाया, मागलिक वचन बोलकर प्रधान कौतुक, मगलोपचार और शान्तिर्कर्म किया । फिर एक-सरीखी, समान त्वचावाली, समान वय वाली, समान रूप लावण्य और यौवन वाली, विनीत, कौतुक मगल प्रायश्चित्त कर लिया है जिन्होंने ऐसी, समान गजकुलों से बुलाई गई, 'पुष्करचूला' वगैरह उन पाच सौ राजकन्याओं को, मुहागिनी स्त्रियां से आठों अंगों में भूषण पहनाकर और मागलिक गान पूर्वक, उन कन्याओं के साथ एक ही दिन पाणि-प्रहण (विवाह) करा दिया, पश्चात् सुबाहुकुमार के माता पिता ने नीचे लिखा हुआ दान प्रम पूर्वक दिया, वह इस प्रकार है—

पाच सौ चाटी के सिक्के, पाच सौ मोने के सिक्के, पाच सौ मुकुट, पाच सौ उत्तम मुकुट, पाच सौ कुडलो के जोड़े, पाच सौ उत्तम कुडला के जोड़े, पाच सौ हाग, पाच सौ उत्तम हाग, पाच सौ अर्द्धहाग, पाच सौ उत्तम अर्द्धहाग, पाच सौ एकावली हाग, पाच सौ उत्तम एकावली हाग, पाच सौ मुक्तावली हाग, पाच सौ उत्तम मुक्तावली हाग, पाच सौ कनकावली हाग, पाच सौ उत्तम कनकावली हाग, पाच सौ रत्नावली हाग, पाच सौ उत्तम रत्नावली हाग, पाच सौ जोड़े कड़े, पाच सौ उत्तम जोड़े कड़े, पाच सौ जोड़े भुजवत्र, पाच सौ जोड़े उत्तम भुजवत्र, इमी त-गह अलसी के वस्त्र युगल, टसर के वस्त्र युगल, पाच सौ पट्टसूत्र के युगल, पाच सौ दुकूल, पाच सौ श्रीदेवी की प्रतिमाए, पाच सौ हीदेवी की प्रतिमाए, पाच सौ धृतिदेवी की प्रतिमाए, पाच सौ कीर्तिदेवी की प्रतिमाए, पाच सौ बुद्धिदेवी की प्रतिमाए, पाच सौ लक्ष्मीदेवी की प्रतिमाए;

पाच नौ नन्दामन, पाच नौ भद्रामन, पाच नौ तालवृक्ष, पाच सौ उत्तम
 गत्नों से जट्टे हुए नाल वृक्ष, (ये आननादि सब गत्ना से जट्टे हुए थे) अपने
 अपने प्रधान वर्गों के लिए पाच नौ पताकाण, पाच नौ साधारण अज्जा
 पाच सौ गोकुल, पाच नौ उत्तम गोकुल, दश दश हजार गायों का एक
 गोकुल होता है। बत्तीस बत्तीस पात्र वाले पाच नौ साधारण नाटक और
 पाच सौ उत्तम नाटक, पाच नौ साधारण घोट, पाच नौ बटिया घोट,
 सर्वगत्नमय लक्ष्मी के भंडार मर्गवे पाच २ नौ साधारण और उत्तम हार्थी,
 सर्वगत्नमय लक्ष्मी के भंडार जेमे पाच नौ साधारण और प्रधान मरग
 (गाडी आदि), पाच नौ उत्तम तामकाम टना तरह पालगी स्यन्दमानी
 (विशेष पालगी) हार्थी का होटा, और दो घोट की बत्ती, पाच पाच
 नौ साधारण और उत्तम विरुट-धान (बिना छन की मरग) पाच नौ ग्य
 कीडा आदि के लिए, पाच नौ ग्य मरग के लिए (पुट्ट के लिए), पाच
 २ नौ साधारण और श्रेष्ठ घोट, पाच २ नौ साधारण और श्रेष्ठ हार्थी, एक
 एक गात्र के आधीन दस दस हजार गात्र जेमे पाच नौ साधारण ग्राम,
 पाच नौ उत्तम ग्राम, पाच नौ साधारण और पाच नौ प्रधान ग्राम, इन्हीं
 तरह दानिये, किकर कचुकी (अन पुर का चरगनी) वर्षा (नोजा-
 ने नपुसक जो अन्त पुर मे कार्य करते हैं) मरुत्त अन्त पुर का काम-
 काज करने वाले, पाच नौ सोने की साकलगल दीपक, पाच सौ चादी की
 साकल वाले दीपक, पाच नौ सुवर्णमयम साकल के दीपक, पाच नौ
 सोने की मर्गट (दीपक) पाच नौ चादी मर पाच नौ
 चादी-सोने के दीपक, पाच २ सौ सोने चादी और सोने- चादी के
 लालटेन वाले दीपक, पाच २ सौ सोने, चादी और सोने-चादी के बत
 हुए दीपक, पाच नौ सोने के थाल, पाच नौ चादी के थाल, पाच नौ
 सुवर्ण-चादी के थाल, पाच नौ सोने के परत, पाच सौ चादी के परत,
 पाच नौ सोने-चादी के परत, पाच नौ सोने के तासक, पाच सौ चादी

के तासक, पाच सौ सोने- चादी के तासक, पाच सौ सोने के कटोरे, पाच सौ चादी के कटोरे, पाच सौ सोने-चादी के कटोरे, पाच सौ सोने के चमचे, पाच सौ चादी के चमचे, पाच सौ सोने-चादी के चमचे, पाच सौ सोने के पीकदान, पाच सौ चादी के पीकदान, पाच सौ सोने-चादी के पीकदान, पाच सौ सोने के तापिकाहस्त (खुरपे), पाच सौ चादी के तापिकाहस्त, पाच सौ सोने- चादी के तापिकाहस्त, पाच सौ सोने- चादी के तापिकाहस्त, पाच सौ सोने के अवपाक्य (तवा) पाच सौ चादी के अवपाक्य, पाच सौ सुवर्ण-रूप्यमय अवपाक्य, पाच सौ सोने, चादी और सोनाचादी के बाजौट, तीनों तरह के पाच सौ आमन- विशेष, तीनों तरह के पाच पाच सौ पानदान, अथवा कुटा, तीनों तरह के पाच पाच सौ पलग, तीनों तरह के पाच पाच सौ प्रतिग्रयण (छोटे पलग) पाच सौ हसादिक के आकार के आमन, पाच सौ क्रांसासन, पाच सौ गरुडामन, पाच सौ उन्नतासन, पाच सौ पनकामन, पाच सौ दीवामन, पाच सौ भद्रासन, पाच सौ पद्मासन, पाच सौ मकरासन, पाच सौ पद्मामन, पाच सौ दिशासौ श्मिकामन (दक्षिणावर्त्त स्वस्तिक के आकार वाले आमन) पाच सौ तेल के वर्तन । इनके सिवाय रायपसेणी सूत्र में ऋह नगसौ रग्वने के वर्तन तक सब चीजे, पाच सौ कुचडी दामिया, इन के सिवाय औपपातिक सूत्र में कहा हुई पाच सौ पागनी दासियों तक, पाच सौ छत्र, पाच सौ छत्र-शामन-वाली दामिया, पाच सौ चैवर, पाच सौ चैवर टोहन वाली दासिया, पाच सौ पखे, पाच सौ पखे मलने वाली दामिया, पाच सौ पानदान उठाने वाली दामिया, पाच सौ धाण, यावत् पाच सौ गोड में खेलाने वाली धाण, पाच सौ अग को मलने वाली दामिया, पाच सौ मर्दन करने वाली दामिया, पाच सौ स्नान कराने वाली दामिया, पाच सौ श्रृंगार करने वाली दासिया, पाच सौ चन्दन आदि को पीसने वाली, पाच सौ चूर्ण (ताम्रूल-पान का ममाला अथवा सुगंधि द्रव्य) पीसने वाली, पाच सौ क्रीडा करनेवाली,

पाच सौ मनोरजन करने वाली, पाच सौ राजसभा के समयमाय रहने वाली, पाच सौ नाटक सम्पन्विनी पाच सौ किङ्करा (चपगमिन), पाच सौ रमोई बनाने वाली, पाच सौ भटार की ग्यवाली (देखभाल) करने वाली, पाच सौ बालकों को खेलाने वाली, पाच सौ क्रलों के घरकी ग्यवाली करने वाली, पाच सौ जलवर की रक्षा करने वाली, पाच सौ पूजा करनेवाली पाच सौ सेज (विज्ञान) विद्वाने वाला, पाच सौ अन्त पुग की परिचागिकाण पाच सौ बाहर की परिचागिकाण, पाच सौ माला गथने वाली, और पाच सौ पामने वाली दानिया दी । उन के मिवाय बहुतसी चादी सोना ज्ञाना वस्त्र विपुल वन आदि विद्यमान उत्तम उत्तम चीजें दा । वे चाजे इतनी काफ़ा था, कि यदि मन को इकड़ा करके उन का मान पीछी तक दोनो को दान दिया जाय स्वय उपभोग किया जाय और हिस्सेदारों को ना बाधा तब तोभी समान नहो ॥ ४१ ॥

मूलम्—नपणं से सुवाहुकुमारं एगमेगाए भज्जाए एगमेगं हिरण्णकोडिं दलयति । एगमेगं सुवण्णकोडिं दलयति । एगमेगं मउडं दलयति । एवं चैव सउवं जाव एगमेगं पेसणकारि दलयति । अपणं च सुवहुं हिरण्णं जाव परिभाणउं ॥४२॥

भावार्थ— उनके पश्चात् सुवाहुकुमार ने इरण्ण पत्नी का एक एक कगोट चादा के और एक एक कगोट सोने के सिंहे दिये । इसी तरह पामने वाला दानियों तक सब वस्तुष वा उर्दातमा और भी उपभोग आदि के लिए बहुत ना सोना चादी दे दिया ॥४२॥

मूलम्— नपणं से सुवाहुकुमारं उप्पिपासाववरणणं फुट्टमाणेहि मुडंगमत्थणहि वत्तीमनिवद्धेहि नाडएहि णाणा-

विह्वरतरुणीसंपउत्तेहि उवनच्चिज्जमाणे उवनच्चिज्जमाणे उवगि-
ज्जमाणे उवगिज्जमाणे उवलालिज्जमाणे उवलालिज्जमाणे पाउ-
स १ वासारत्त २ सरद ३ हेमंत ४ वसंत ५ गिम्ह ६ पज्जंते
छप्पि उट्ठं जहाविभवेणं माणमाणे माणमाणे कालं गालेमाणे
गालेमाणे इट्ठे सद्वरिसरसरुवगंधे पंचविहे माणुस्सए काम-
भोगे पच्चणुवभवमाणे विहरति ॥४३॥

भावार्थ— अनन्तर सुबाहुकुमार ऊपर के महल में रहता हुआ
अनेक तरुणी रमणियों से युक्त तथा मृदुगों की ध्वनि सहित, बत्तीस प्रकार
के नाटकों में इच्छानुसार नाच और गान करता हुआ, मुहावनी २ क्रीडाएँ
करता हुआ रहने लगा । प्रादृष्ट, वर्षा, शरद, हेमन्त, वसन्त, और ग्रीष्म
इन छह ऋतुओं में पेश्वर्य के अनुसार काल को व्यतीत करता हुआ पाच
प्रकार के इष्ट रूप-रम-गंध स्पर्श—कामभोगों को भोगता हुआ रहने लगा ॥४३॥

मूलम्— तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महा-
वीरे आइगरे तित्थगरे सयंसंबुद्धे पुरिसुत्तमे पुरिससीहे
पुरिसवरपुंडरीए पुरिसवरगंधहत्थी अभयदए चक्रवुदए मग्ग-
दए सरणदए जीवदए दीवो ताणं सरणं गई पइट्ठा धम्मवर-
चाउरंतचक्कवट्ठी अप्पडिहयवरनाणदंसणाधरे विघट्ठच्छउमे
जिणे जाणाए तिन्ने तारए मुत्ते मोयगे बुद्धे बोहण सव्ववृ
सव्वदरिसी सिवमयलमरुअमणंतमक्खयमव्वावाहमपुणरा-
वत्तिअं सिद्धिगइनामधेज्जं ठाणं संपाविउकामे अरहा जिणे
केवली सत्तहत्थुस्सेहे समचउरंसंस्टाणासंष्टिए वज्जरिसहना-
रायसंघयणे अणुलोमवाउवेगे कंकग्गहणी कवोयपरिणामे
सउणिपोसपिट्ठंतरोरुपरिणए पउमुप्पलगंधसरिसनिस्साससु-
रभिवयणे छवी निरायंकउत्तमपसत्थअइसेयनिरुवमपले
जल्लमल्लकलंकसेयरयदोसवज्जियसरीरनिरुवलेवे छायाउज्जो-

इअंगमंगे घणनिचियसुवद्वलकखणुणयकडागारनिभपि-
 डियगसिग्ग मामलियांडघणनिचियच्छोडियमिडविसयप-
 सन्धसुदुमलकखणसुगंधसुंदरभुयमोयगभिंमनेलकज्जलपहि-
 ट्टममरगणसिद्धिगिकुरवणिचियकुं चियपयाहिणावत्तमुद्धमि-
 रण ढाडिमपुप्फप्पगासनवगिजसरिसनिम्मलसुणिद्धकेसं-
 तकेसभूमो घणनिचिय० दत्तागारुत्तमंगदेमे णिव्वणसम-
 लट्टमट्टचंदद्वममणिडाले उडुवद्वपडिपुणसोमवयणे अल्लीण-
 पमाणजुत्तसवणे सुसमवणे पीणमंसलकवालदंसभाण आ-
 णामियचावरुडलक्किणद्वभराडनणुकमिणणिद्धभमुहे अवदा-
 लियपुडरीयणयणे कांआसिअभवलपत्तलच्छे गरुत्तायनउ-
 ज्जुत्तुंगामे उवचिअमिलप्पवालधिवफलसणिभाहरोट्टे
 पडुरसमिसयलविमलणिम्मलसंखगोखारफेणकुंददगरय-
 मुणालिआभवलदन्तसेढी अग्वडदंते अप्फुडियदंते अवि-
 रलदंते सुणिद्धदंते सुजायदंते णगदंतसेढी विव अणेगदंते ह्य-
 वद्वसिद्धंतधोयतत्तवगिज्जरत्तनलनालुजाहे अवट्टिय-
 सुविभत्तचित्तमंस मंसलसंठियपसन्धसद्वलविउलहण चउ-
 रंगुलसुप्पमाणकंबुवरसरिसगीवे वग्महिसवराहसीहसद्वल-
 उसभनागवरपडिपुत्रविउलकन्वंधे जुगसन्निभपीणरहयपीवर-
 पउट्टसुसंठियसुसिलिट्टविसिट्टघणथिरसुवद्वसंधिपुरवरफलिट्ट-
 वट्टियभुण भुअईसरविउलभोगआढाणपलिहउच्छूढदीहवाङ्ग
 रत्ततलोवह्यमउअमंसलसुजायलकखणपसन्धअच्छिद्ध -
 जालपाणा पीवरकोमलवरंगुली आयंयनंयनलिणसुद्वरुडलणि-
 द्ढणक्खे चंदपाणिलेहे मूरपाणिलेहे मंखपाणिलेहे चक्कपा-
 णिलेहे दिमामोत्थिअपाणिलेहे चंदमूरसंखचक्कदिसासोत्थि-

अपाणिलेहे कणगसिलातलुज्जलपसत्थसमतलउवचियवि-
 च्छिण्णपिहुलवच्छे सिरिवच्छंक्रियवच्छे अकरंडुअकणग-
 रुयपनिम्मलसुजायनिरुवहयदेहधारी अट्टसहस्सपडिपुन्नवर-
 पुरिसलक्खणधरे सण्णयपासे मंगयपासे सुंदरपासे सुजा-
 यपासे मियमाइअपीणरइअपासे उज्जुअसमसहियजच्चतणु-
 कसिणणिद्धआइज्जलउहरमणिज्जरोमराई झसविहगसुजा-
 यपीणाकुच्छी भूसोदरे सुहकरणे पउमविअडणाभे गंगाव-
 त्तकपयाहिणावत्ततरंगमंगुररविकिरणतरुणवोहियअकोसा-
 यंनपउमगांभीरवियडणाभे साहयसोणंदमुसलदप्पणणिकरि-
 यवरकणागच्छरुसरिसवरवइरवलिअसज्जे पमुइयवरतुरग-
 सीहवरवट्टियकडं वरतुणसुजायसुगुज्जदेसे आइण्णहउव्व-
 गिरुवत्तेवे वरवारणतुल्लविककमविलसियगई गयससणसु-
 जायसन्निभांरु समुग्गणिसग्गइजाणू एणीकुरुविंदावत्तव-
 ट्ठाणुपुव्वजंवे संठियसुसिलिट्टविसिट्टगइगुप्फे सुप्पइट्टियकु-
 म्मचारुचलणे अणुपुव्वसुसंहयंगुलीए उण्णयतणुतंवणिद्धण-
 क्खे रत्तुप्पलपत्तमउण्णयतणुतंवणिद्धणक्खे रत्तुप्पलपत्त-
 मउअसुकुमालकोमलतले अट्टसहस्सवरपुरिसलक्खणधरे न-
 गनगरमगरसागरचक्कंकरंक्रमंगलंक्रियचलणे विसिट्टरूवे
 हुयवहनिट्टमजलियतडितडियतरुणरविकिरणसरिसतेण -
 अणासवे अममे अकिचयो छिन्नसोए निरुवत्तेवे ववगयपेम-
 रागदोसमोहे निग्गंधस्स पवघणस्स देसए सत्थनायगे पइट्टा-
 वए समणगपई समणगविंदपरिअट्टए चउत्तीसबुद्धवयणाति-
 सेसपत्ते पणतीससच्चवयणातिसेसपत्ते । आगासगएणं चक्के-
 णं आगासगएणं छत्तेण आगासगयाहि सेयवरचामराहिं आ-
 गासफलिहामएणं सपायणीडेणं सीहासणेणं धम्मज्झएणं पुर-

ओ पकडिजमाणेणं (*चउदहसाहि समणसाहसमाहि छत्तीसा-
ए अजियासाहसमाहि) सद्धि संपरिवुडे पुढवाणुपुढ्वि चर-
माणे गामाणुगामं दृढजमाणे सुहंमुहंणं विहरमाणे हटिय-
सीसे नगरे पुष्करंडे उज्जागे वप्राओ पुढर्वामिलापट्टण वन्न -
ओ नहेव समोसरनि ॥ ४४ ॥

भावार्थ— उमी जलक उमी मनर भगवान महागर को दि अरि
हत अरमा मे वर्म की आदि करने वाले, चार नरोत्री स्थापना करनेवा
ले, स्वयंबुद्ध पुनोत्तम पुरुषनिइ पुनपुण्टगीक पुनपुगगन्वहस्ता अमय
दाता, ज्ञानदाना मो समार्गदाना अशरण के शरण नयमदाना, समार समु
द्रमे द्वीप की नाई सहाग देने वाले, परतीवा के प्रावार भूत चक्रता
की तरह तीन समुद्र और विमान परीत तरु वीचक चलाने वाले, नि।
वाण और उत्तम ज्ञान दर्शा को वाण करन वाला, छत्तम्य (अमर्षक)
ता से हिन, गगदेष को जीवने जाने, गगद्वय आदि के रत्नत्त जाण
और फल को जानने वाल समार मया समुद्र से तिने और तहने वाले
स्वय वातिया कर्मा से मुक्त और दृमगे को मुक्त करने वाले तत्प्राके ज्ञ-
नकार और दृमगे को ज्ञान देने वाले, विद्व अरमा की अपेना नरोत और
नरोदशा, निरुपद्रव, निथल, नीगेग अनन्त, अक्षय, निवाय जिन से
वापस न आवे ऐसी विद्वगति को प्रम होत जाने, टन्त्रों से पृथ्व, जिन,
केवली, मातहाय लम्बे, समचतुल्ल सम्थान वाले, वज्रभू भन गच महहनवाले,
शरीर के अन्दर की अनुकूल वायु के वेगवाले, कमरुकी की नाई नीगेग
गुडा स्थान वाले, ऊन्नत की तरह नीय जठ गिनवाले, शकृति परती की
तह मन मे निर्लप अमान (गुडा) वाले, पीठ पमवाडे और जैवों के
विशेष (मुन्दर) आकार वाले ये । भगवान का पन्न (मुगन्धि द्रव्यविजय)
और नीले कमल सर्गीर्वा मुगन्ध वाले नि श्वाम से मुगन्धित था ।

* यह पाठ टीका मे नहीं ह ।

उन के शरीर की छवि निगली थी और त्वचा अति कोमल थी ।—
 उन का मांस नीरोग उत्तम सफेद और निरुपम था । उनका शरीर मैल,
 प्रशुभ तिनकादि, पसीना और वृल आदि की मलिनता से रहित अतएव
 निर्मल था । उनके अगोपाग कान्ति से चमकते थे । उनके स्नायुबन्धन
 शुभ लक्षण वाले और इतने मजबूत थे जैसे लोहे का धन । उनका शिर
 ऐसा मान्द्र होता था, जेमे पर्वत के शिखर का पात्राणपिण्ड । उनके सिर
 के बाल मेमल की रङ्ग की तरह नरम, स्वच्छ शुभ, चिकने और शुभ-
 लक्षणा से युक्त थे । सुगन्धवाले सुन्दर भुजमोचक रत्न और मृग (एक
 तरह का कीड़ा) की तरह, नील की तरह कज्जल की तरह और मदोन्मत्त
 भागे की तरह काले काले दक्षिण की ओर घुमे हुए घने और घुंघरवाले थे ।
 उनके मस्तरु की त्वचा (बालों के पंखा होने की जगह) अनाग के फूल
 था तगे हुए मोन की नाई (लाल) निर्मल (स्वच्छ) और चिकनी थी ।
 उनका मस्तरु भग दुआ छत्र के समान उन्नत था । ललाट वाय आदि से
 रहित, समान मनोज्ञ और दीप्त था, अतः ऐसा मान्द्र होता था, मानो
 अर्द्धचन्द्र हो । मुख पूर्ण चन्द्रमा की तरह मौम्य था । कान राटे हुए थे—
 न छोटे न बड़े—पमाणयुक्त-थे । वे बडे भले मन्त्रम होते थे और उनका
 त्रिभय तेज था । उनके गाल स्थूल और मासल (पुष्ट) थे । भोड़े थोड़े
 नमे हुए धनुष की नाई मनोज्ञ या काले बाटल की रेखा की तरह काले और
 भिन्न थे । नेत्र खिन्ने हुए सफेद कमल जैसे थे, अतः उनके कोपे विकसित
 कमल सरीखे उज्वल और पद्म (पलक) वाले थे । नाक गरुड की तरह
 लग्नी सीधी और ऊची थी नीचेका ओठ कामदार सिलारूप प्रवाल (मृगा)
 और त्रिभ्रफल सरीखा लाल था । दातों की पक्ति स्वच्छ चन्द्र का टुकड़ा,
 अत्यन्त निर्मल श्व, गाय के दूध के फेन कुन्ड पुत्र . जल की बूँद और
 आणामियचावरुदलरुगहाचमराडसठियसगयत्राययसुजायभमुण । उन
 के भोड़े थोड़े नमे हुए धनुष की तरह सुन्दर और काले मेघकी रेखा के स
 मान काले सुन्दर आकार के, उचित लवे त्रार अच्छे बने हुए थे ।

कमल के दण्ड सर्गर्वा सफर था। ने दात दूट छिद्र (२२) न थ। अतिशय स्निग्ध थे। मनोहर थे और एक दात की पक्ति की तरह हा अनेक दात थे (क्योंकि वन होने से एक दूसरे से अलग मानूम न पडते थे) तालु और जिह्वा, अग्नि से निर्मल किए हुए, पानी में डोए हुए तथा फिर अग्निम तपाए हुए मान की नाई लाल थी। दाही और मँडू के बाल, न बढन वाले, अलग अलग और मनोहर थे। दाही भरी हुई मुन्दर शुभ लक्षणयुक्त विस्तीर्ण और व्याघ्रकी दाहीकी तरह थी। ग्रीवा (गर्दन), चार अगुलकी और उत्तम शव जमी थी। कव, महिष शूकर सिंह गार्दूल व्याघ्र बेल और गजेन्द्र सर्गिसे यथाप्रमाण और विस्तीर्ण थे, तथा यष (यज्ञ के खंभ) सदृश लम्बे चौड़े, मोटे और मनोहर थे। उन की कलाई भी स्थूल थी मुन्दर आकारवाला मुसद्गत उत्तम पुष्ट शिथ और मजबूत जोड वाला था। मुत्राण नगद्वार की अगल का तरह थी। वष्नी मानूम हाती थी, जेमे किमी उष्ट पदार्थ को ग्रहण करन के लिए जान हुए नागराज का लम्बा शरीर हो। हाथ (हथेली) उठी हुई, फामल लाल, मानल (पुष्ट) मुन्दर और मामुद्रिक शात्र के शुभ चिन्हों से युक्त थे। अगुनियों के बीच म छद नहा पटन थ। अगुलियों स्थूल कोमल और मुन्दर था। अगुलियों के नख, ताव की तरह कुछ कुछ लाल पनल पवित्र चमकाले और चिकन थे। हाथ काग्वारु चन्द्रमा जेम आकारवाला मृगज जैसे आकार वाली शव जम आकार वाली और चक्र के आकार का तथा शङ्खिने और घुमे हुए माथिया के आकार वाली थी। चंद्र, सूर्य शख, चक्र दिशा के आकार का और दक्षिणावर्त माथिया के आकार का गेवाण था। वक्षस्थल, सोने की गिला के समान उन्वल शुभ, ममल मामल (पुष्ट) विस्तीर्ण और अत्यन्त विशाल था। श्रीवत्स के चिन्ह से

प्रवान्त विषय को अधिक उन्कृष्ट दिखाने के लिए दुहराया गया है।

शोभित या । उन का दह मामल (भराहुआ) था, अतः पीठ की हड्डी
 दिखाई न देती थी । मोने की सी कान्ति वाला था । सुन्दर और रोगादि
 स रहित था । पुरुष के सम्पूर्ण १००८ लक्षणों से युक्त था । पसवाड
 कमलः पतले होते गये थे । शरीर के प्रमाण के अनुसार ही पसवाडे थे ।
 इसीलिए वे सुन्दर और मनोहर थे तथा अच्छे परिमाण वाले मोटे और
 और सुन्दर थे । रोमराजि, सीधी विपमता रहित बनी पतली काली स्निग्ध
 दर्शनीय लावण्य वाली और रमणीय थी, कृक्, भ्रुव (मछली) और पद्मी
 की तरह सुन्दर भरी घुगी थी । उदर (पेट) मच्छ की तरह था । पाचा
 इन्द्रिया पवित्र था । नाभि, कमल की तरह विस्मय थी । तथा गंगा के
 मैवकी तरह नगुर तथा तन्त्र (दोपहर के) सूर्य से विकसित होनेवाले
 कमल की नाई गम्भार आर विशाल थी । मध्यभाग, त्रिकाटिका (तिरुटा)
 सुसल, दर्पण परकउन के काष्ठ तथा शुद्ध किए हुए सोन का तलवार की
 गूठ की तरह पतला थी आर उत्तम वज्र के मध्यभाग की तरह बनी हुई
 थी । अर्थात् जिस तरह तिकठी (निर्वाही) के ऊपर का भाग समस्त के बीच
 का भाग, दर्पण परकउन का काठ, तलवार की मूठ का मध्यभाग पतला होता
 है, उर्मा तरह भगवान का मध्यभाग (कमर) पतला था आर वज्र की
 तरह जगसा टटा था । कमर, नीरोग घाडे और बद्धर शर की कमर नरी-
 या गोल था । गुह्य देश, घोडे के गुह्य दंड की तरह सुजात (सुदर)
 था । जल्पश्व (उत्तम अश्व) की तरह उनका शरीर मल मूत्र आदि स
 रहित था । भजगज की तरह परकम और विलाम पूर्ण भगन था । जात्र
 हाथी का सूड की तरह पुट थी । घुटने, मांस स भरे हुए होने के कारण
 ऐसे मिले हुए थे, जैसे अनान भरनही कोठा और उसका टकन आपसम मिना
 रहता है । पिटला हरिणी की पिडली आर कुरुविन्द (तृण विशेष) की
 तरह नीचे रकमसे पतली होती गई थी । घुटिकाएँ सुन्दर आकार वाली,
 उत्तम और मामल होने से गूढ थी । चरण, सुदर और कट्टुव के समान

उन्नत थे। अगुलिया पत्रायोग्य छात्रा बडा और एक दृग्नी से मिली हुई थी। पत्र के नव, उन्नत पत्रदेतावे के पत्रे कुल्लर लात और चिकने थे। तनुव, बाल कल्पन क पत्रे नगीवे कंगमर और सुन्दर थे। शरीर १००० पुष्पो के शुभ लक्ष्मीसे पुस्त था। चरण नग (परित) नगर मगर मागा र्व का पहिया और उन के अतिरिक्त थोठ तथा मागतिर चिन्हों से अंकित थे। विडिष्ट रूपवाले थे। उनका तेज, पुत्रा रहित अग्नि, विचली और दा पहर के सूर्य की नाई दीप्त था। उनको काम का आश्रय नहा होना था। माना रहित थे। अकिचन (परिग्रह रहित) थे। जोरु शून्य थे। तय और भात्र परिग्रहे रहित थे। प्रग (शान्तिरूप) गग (विषयानुगम) द्वेष और पाह न रहित थे। निरन्तर प्राचन (आगम) के उपदेशक थे। उपदेशक क न पर और उनको रक्षापना काम वाले थे। नायु सत्रके अविषनि और नायुओं क सम्बन्धको बहान वाले थे। तीर्थहराक वचनादि चार्ताम अतशयो से और पत्नीम नव्य रचन क अतिशय से युक्त थे। भगवानक प्राग अग धर्मवद आकाश में चलता था। तान उर एकश म भगवान के ऊपर रहने थे। आकाश म हा अन्तिम सगत्र पत्र तुलने थे। आकाश की तरह स्पष्ट रक्तिक क निदानन पर बैठ हुए थे। धर्मवचन (उन्डव्यजा)का देवलोत आगे अगे ले जा रह थे। चौदह हजार नायु और उत्तम हजार नादियेमे धिरे हुए काम (आग वाले) चरते हुए ग्रामानुप्राप (एक ग्राममे तय ग्राम) जाते हुए, आनन्दके म. र विशार करने हुए इन्तिशायि नगर म प्रबोक्त पुत्ररुग्गड उयन में पूर्व-प्रागत पृथ्वीशिला पद नहा था, तया नमयसग्न रहित पत्रो ॥४४॥

मूलम्— परिसा निगया अदीगासत् जहा कोशिए तहेव निगने । जहा उववाडए, जाव निविहाण पञ्जुवास-

गाए षज्जुवासति । तए णं तस्स सुवाहुस्स कुमारस्स नं
 महया जणसहं वा जाव जणसन्निवारं वा सुणमाणस्स वा
 पासमाणस्स वा अयमेघारुवे अज्जत्थिए जाव समुप्पज्जित्था
 किणं अज्ज हत्थिसीसे नगरे इन्दमहेइ वा खंदमहेइ वा
 मुगुंदमहेइ वा णागमहेइ वा जक्खमहेइ वा भूयमहेइ वा
 कूवमहेइ वा तडागमहेइ वा नईमहेइ वा दहमहेइ वा पव्व-
 यमहेइ वा ख्खमहेइ वा चेइयमहेइ वा थूभमहेइ वा ज-
 णं एए वहवे उग्गा भोगा गइन्ना इक्खागा णाया कोरव्वा
 खत्तिया खत्तियपुत्ता भडा भडपुत्ता सेणावई पसत्थारोले-
 च्छइ माहणा इव्भा, जहा उववाडण जाव सत्थवाहप्पभित्ति-
 ए ण्हाया कयवलिहम्म जाव निग्गच्छंति, एवं संपेहेति एवं
 संपेहेत्ता कंचुडज्जपुरिसं सहावेइ, सहावेत्ता एवं वयासी, कि
 णं देवाणुप्पिया! अज्ज हत्थिसीसे नगरे इंदमहेइ वा जाव
 निग्गच्छंति? तए णं से कंचुडज्जपुरिसे सुवाहुणा कुमारेणं
 एवं वुत्ते समाणे हट्टुट्टे समणस्स भगवत्तो महावीरस्स आ-
 गमणगहियविणिच्छिण करयल० सुवाहुकुमारं जणं विज-
 णं वद्धावेइ, वद्धावेत्ता एवं वयासी, णं खलु देवाणुप्पिया!
 अज्ज हत्थिसीसे नगरे इंदमहेइ वा जाव निग्गच्छति । एवं
 खलु देवाणुप्पिया! अज्ज समणे भगवं महावीरे जाव सव्वन्न
 सव्वदरिभी हत्थिसीसस्स नगररस वट्ठिया पुप्फकरंडे चेइण
 अहापडिरुवं उग्गहं उगिण्हित्ता णं जाव विहरति ॥४५॥

भावार्थ— जनसमूह भगवानको वन्दना करनके लिये निकला ।

अटीमञ्जु राजा भी महाराज कोणिक मी तरह निकला । आपपातिक
 (उववाइ) सूत्र के अनुसार (यात्रत) मन वचन और काय इन तीन प्रकारों

म उपासना ही । उनी वषय मुवाटकुमारन गोप्य मनुष्य क शब्द
 (यावत्) बहुत कायान्त मुनकर उक्त दण्डक उतर, मन में इस प्रकार
 मकन्य पैसा हुआ । आज हस्तिशार्प नगर में क्या उन्नादिजा गहोत्मव है ? या
 कानिकेय-महात्मव है ? या गामुद्वय अथवा वरद्वयका उतर है ? या नग-
 जगार का उत्मव है ? या पक्ष का महोत्मव है ? या भूती (भयनपामी उव
 विशेष) का महोत्मव है ? या कव महोत्मव है ? या नालाय महोत्मव है ?
 या नदी महोत्मव है ? या द्रव (द्रुमट) महोत्मव है ? या पर्वत महोत्मव है ?
 या उभ महोत्मव है ? व चल्प महोत्मव है ? या नुम (नव) महोत्मव है ?
 निम्मे कि य वदुमे उपासीय नोगलीय नगमान्क उशते उन्वाज
 वसीय जनप्रजाय कुन्शीय श्रिया, श्रियापुत्र जर्गीय जर्गीयपुत्र
 मनापति, नर्मशास्त्र के पठर, लच्छकी (गन्विशय) ब्राह्मण (गन्वि,
 (उमके मिय व उपाटी म कर मनन्ना गजव), गौ नर्वज गायरी,
 गौ व लोग न्नान करक गहदेवता की उजा क क (गवत्) निरुत्
 "ह ह । मुवाटकुमारन इस तरह दण्डक मनुका (मन्ना मु गनगाम की
 देवमाल करन गले) को बुलाया । बुलाका बोला--- ह देवानुप्रिय ।
 आज हस्तिशार्प नगरमे क्या उन्नादिजा महोत्मव है ? निम्मे कि (यावत्)
 लोग बाहर निरुत् "ह है । तत्र यह कचुकी मुवाटकुमारका बात मुनकर
 प्रमन्न हुआ । और यमण नगवान् महावीरके आगमन का निश्चय कर के
 हाथ जोड़कर, 'जय हा' 'विजय हो' कहकर बघाट देने लगा । बघाट
 देकर इस प्रकार बोला, ह न्यामिन । आज हस्तिशार्प नगरमे उन्नादि महो-
 त्मव नहा है (यावत्) लोग बाहर निरुत् गह है । ह देवानुप्रिय । आज
 श्रमण भगवान् महावीर (गवत्) नर्वज, नर्वदशा, हस्तिशार्प नगर के
 बाहर पुप कागट चल्प म यथायोग्य, अभिपहकी पहण करके (यावत्)
 विहार कर रह है ॥४५॥

मूलम्— तण्णं एए वह्वे उग्गा भोगा जाँव अप्पेगइ-
या वंदणवत्तियं अप्पेगइया पूयणवत्तियं एवं सक्कारवत्तियं
सम्माणवत्तियं दंसणवत्तियं कोऊहलवत्तियं अप्पेगइया
अत्थविणिच्छयहेउं अस्सुयाइं सुणिस्सामो सुयाइ निस्संकि-
याइं करिस्सामो । अप्पेगइआ अट्टाइं हेऊइं कारणाइं वागर-
णाइं पुच्छिस्सामो, अप्पेगइआ सब्बओ समंतामुंडे भविता,
अगाराओ अणगारियं पव्वइस्सामो, अप्पेगइया पंचाणुव्वइयं
सत्तसिक्खावइयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जिस्सामो ।
अप्पेगइआ जिणभत्तिरागेण अप्पेगइया जीअमेयंति कट्टु-
पहाया कयवलिकम्मा कयकोउयमंगलपायच्छित्ता मिरसाकंटे
मालाकडा आविद्धमणिसुवण्णा कप्पियहारद्धहारतिसरयपा-
लंवलंवमाणकडिसुत्तसुकयसोहाभरणा पवरवत्थपरिहिया
चंदणोलित्तगायसरीरा अप्पेगइया हयगया एवं गयगया
रहगया सिविघागया संदमाणिघागया अप्पेगइया पायविहार
चारेणं पुरिसवग्गुरापरिक्खित्ता महया उक्किट्टसीहणाय-
वोलकलकलरवेणं पक्खुविभयमहासमुद्धरवभृतं पि व करे-
माणा हत्थिसीसस्स नगरस्स मज्झंमज्जेणं शिण्णच्छंति ।

तए णं से सुवाहु कुमारे कंचुइज्जपुरिसस्स अंतिए
एयमट्टं सोच्चा निसम्म हट्टतुट्टं ० कोडुंविघपुरिसे सदावेह ।
सदावेत्ता एवं वयासी-खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया! चाउग्घंटं
आसरहं जुत्तामेव उवट्टवेह । उवट्टवेत्ता मम एयमाणत्तियं
पच्चप्पिणह । तण्णं ते कोडुंविघपुरिसा सुवाहुकुमारे णं एवं
वुत्ता समाणा जाव पच्चप्पिणंति ॥४६॥

१ भगवती श ६ उ ३३ प ४६१ पृ २ प ११ तक

२ उव सूत्र २७ वां प ५८ पृ. १ प १४ से

३ भग ० श. ६ उ ३३ प ४६१-१ प ११ से

भावार्थ— इमीलिंग ये काई २ उपप्रश्न के भागवतके (यात्रत) लोग बन्दना के लिए, कर्ट एरु पूजा करन के लिए एय मन्कार करने के लिए, मन्मान करने के लिए, दर्शन के लिए, जौतइल के लिए, सुत्रों के अर्थ का निश्चय करने के लिए, नर्था मुने को मुनने और मुने हुए का सन्देह दूर करने के लिए, कोई अर्थ (जीयादिग्रन्थ) हनु, कागण और शक्रा समाधान सम्बन्धी प्रश्न पढ़ने के लिए, कोई सब प्रकार मुटित(द्रव्य की अपक्षा केशों को अलग करना गान की अपेक्षा कपायादि में अलग) होकर गृहस्थ ने साधु होने के लिए कोई पचागुनत और मान शिक्षाव्रत (३ गुण व्रत और ४ शिक्षाव्रत) इन प्रकार बाह्य तरह के गृहस्थधर्म को अंगीकार करने के लिए, कोई जिनेन्द्र भगवान् की भक्ति में प्रेम होने में, कोई जीत (परम्परागत हमारा आचार) है इन प्रकार मोच करके स्नान कर, गृहदेवता की पूजा कर, तिलक आदि जौतुक और भागलिक दही अक्षत आदि प्रायश्चित्त से पवित्र होकर. मस्तक और कठमेमालाए बागण करके, मणि और मोने के गहने पहिन कर तम लटकने हुए लम्बे हाग, अर्द्ध-हार, तिलडा हाग मुन्दर लत्रे लटकने हुए गुच्छोवाली करधनी आदि मुन्दर २ आभूषण पहनकर, त्रिटिया बढिया वस्त्र पहिन कर, चन्दन का शरीर पर लेप कर, कोई घोडे पर सवार होकर, कोई हाथी पर सवार होकर, कोई रथ पर सवार होकर, कोई पालखी पर सवार होकर, कोई म्यदमान (पुरुषाकार मयागी विशेष) पर सवार होकर कोई पंखल चलते हुए पुरुषों के समूह के समूह तुमन हर्षग्रानि मिहनाद बोल (अव्यक्तशब्द) या कलकल (व्यक्त) शब्द में क्षोभित समुद्र के तीव्र शब्द की नाट नगर को क्षोभित करते हुए, हस्तिशीर्ष नगर के बीचोंबीच होकर निकल रहे हैं । मुवाहु-कुमार कचुकी में यह बात मुनकर हर्ष में मन्तुष्ट हुआ। फिर अपने सेवकों को बुलाया । बुलाकर बोला—मो देवानुग्रिय! चारघटों वाले घोड़ों के रथ को शीघ्र ही लाओ । लाकर मुझे सूचित करो । मुवाहुकुमार के यह कहने

पर सेवकों ने ग्य लाकर उन्हें सूचित किया ॥४६॥

मूलम्— तए गं से सुवाहुकुमारे जेणेव मज्जणधरे तेणेव उवागच्छति । उवागच्छिता ण्हाए कथवलिकम्मे जहा उववाइए परिसावन्नओ तथा भाणियध्वं जाव चंदणोव-लित्तगायसरीरे सव्वालंकारधिभूसिए मज्जणघराओ पडि निक्खमइ, मज्जणघराओ पडिनिक्खमित्ता जेणेव बाहिरिघा उवट्टाणसाला जेणेव चाउग्घंटे आसरहे तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छिता चाउग्घंटे आसरहं दुरूहइ । चाउग्घंटे आसरहं दुरूहित्ता सकोरंटमल्लदामेणं छत्तेणं धारिज्जमाणे णं महया भडचडकरपहकरबंधपरिक्खित्ते हत्थिसीसं नगरं मज्जं-मज्जेणं निग्गच्छइ । निग्गच्छिता जेणेव पुप्फकरंडे चेइए, तेणेव उवागच्छइ । तेणेव उवागच्छिता तुरए निगिण्हेइ । तुरए निगिण्हित्ता रहं ठवेति । रहं ठवेत्ता रहाओ पच्चोरुह-ति । रहाओ पच्चोरुहित्ता पुप्फतंयोलाउहमादियं वाणहा-ओ य विसज्जति । विसज्जित्ता एगसाडियं उत्तरासंगं करेइ । उत्तरासंगं करेत्ता आयंते चोक्खे परमसुह्वभूए अंजलि-मउलियहत्थे जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छ-इ । उवागच्छिता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आया-हिणपघाहिणं करेइ । आयाहिणपघाहिणं करेत्ता तिक्खुत्तो २ जाव तिविहाए पज्जुवासणाए पज्जुवासइ ॥४७॥

भावार्थ— तत्र वह सुवाहुकुमार स्नान घर की तरफ चला आया । वहा आकर स्नान किया । गृहदेवता की पूजा की (परिषद-सभा का वर्णन उववाइं सूत्र के अनुसार जान लेना चाहिए) यात्रत् चन्दन का शरीर पर लेप किया । समस्त अलकारों से भूषित हुआ, और स्नानागार से निकला । निकल कर जहाँ बाहर सभाभवन और चार घटों वाला घोंडो का रथ था, वह

आया । वहाँ आकर ग्यपग चढा । चढकर, कोरट क फुलों से जोधित
मालाश्री क छत्र को धारण करके बहुत मे मुभट और चाकरो के समूह
से घिग हुआ हस्तिगीर्ष नगर के बीचोबीच होकर निकला । निकलकर
जहाँ पुषकरगन् चेत्य था, वहाँ आया । आकर घोडों को रोकर कर, ग्य
रङ्गगा । ग्य ठङ्ग कर ग्य मे उतरा । उतर कर पुष्प, ताम्बूल अन्न शन्न
आग जने वंगरु को वहाँ छोड दिया । छोड कर एकदृपष्टा डाला । कुल्ले
क्रिये, और पगम पवित्र हांकर अञ्जलि करके (दोनों हाथ जोड कर) श्रमण
भगवान् महावीर क निकट आया । आकर, श्रमण भगवान् महावीर की
दक्षिण दिशा से आरम्भ करके तीन प्रदक्षिणाण का । प्रदक्षिणा करके
यावन् भगवान् की मन वचन काय स उपासना क ॥ ४७ ॥

मूलम्— तण्णं समणो भगवं महावीरे सुवाहुस्स कुमा-
रस्स नीसे य महति महालियाण इसिजाव धम्मकहा जाव
परिसा पडिगया । तण्णं मे सुवाहुकुमारं समणस्स भग-
वञ्चो महावीरस्स अंतियं धम्मं सोच्चा निसम्म हट्टुट्ठे जाव
हियण उट्टाण उट्टेति, उट्टाण उट्टित्ता समणं भगवं महावीरं
निक्खुत्तो जाव नमंसित्ता एवं वयासी-महहामि णं भंते
णिगंथं पावयणं, पत्तियामि णं भंते णिगंथं पावयणं, राएमि णं
भंते णिगंथं पावयणं अब्भुट्टेमि णं भंते णिगंथं पावयणं,
णवमेयं भंते, तहमेयं भंते, अविनहमेयं भंते, अमंदिद्धमेयं भंते,
जाव से जहेयं तुब्भे वट्ठहंति कट्टु एवं वयासी-जहा णं देवाणु-
प्पियाणं अंतिण वहवे उग्गा उग्गपुत्ता एवं वृष्पडियारे णं
भोगा राडणणा इक्खागा नाया कोरच्चा खत्तिया माहणा
भडा जोहा पमत्थारो मन्लई लेच्छई पुत्ता अण्णे य वहवे
राईसरतलवरमाडंघियकोडंघियडवभसेट्टिसेणावइसत्थवाह -

पभित्तिओ मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइया,
अहं अहण्णे नो संचाएमि जाव पव्वइयए । अहं देवाणुप्पियाणं
अंतिए पंचाणुव्वयं सत्तसिक्खावयं दुवालसविहं गिहिधम्मं
पडिवज्जिस्सामि । अहासुहं मा पडिवंधं करेह । तए णं से
सुषाहुकुमारं समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए पंचाणु-
व्वयं सत्तसिक्खावयं दुवालसविहं गिहिधम्मं पडिवज्जह ।
पडिवज्जित्ता तमेव चाउग्घंटं आसरहं दुरूहति । दुरूहित्ता
जामेव दिसं पाउब्भूते तामेव दिसं पडिगते ॥ ४८ ॥

भावार्थ— तदनन्तर श्रमण भगवान् महावीर ने सुवाहुकुमार तथा
बहुत विस्तारवाली ऋषियों की यावत् परिपद् (सभा)को धर्मोपदेश दिया ।
यावत् जब पण्डित लौट गई, तब सुवाहुकुमार श्रमण भगवान् महावीर के
पाम धर्मोपदेश सुनकर, उसे हृदय में धारण कर यावत् हृदयसे सन्तुष्ट होकर
उठे । उठकर श्रमण भगवान् महावीर को तीन वार प्रणाम (नमस्कार) करके
इस प्रकार बोले, हे भगवन्! मैं इन निर्ग्रन्थ प्रवचन (जैन-मार्ग) पर श्रद्धान्
करता हूँ और बड़े प्रेम से इस पर प्रतीति करता हूँ । भगवन्! यह निर्ग्रन्थ-
मार्ग मुझे बड़ा भला मान्त्र होता है । हे भगवन्! निर्ग्रन्थ-मार्ग में मैं उद्योग
करता हूँ । हे भगवन्! निर्ग्रन्थ प्रवचन यही है, जैसाकि आपने उपदेश किया
है और यह ऐसा ही है । अन्यथा नहीं है । हे भगवन्! यह सन्देह रहित
है । यावत् जो आपने कहा है । इतना कहकर फिर इस प्रकार बोले जिस
प्रकार देवानुप्रिय (भगवान् महावीर) के समीप बहुत से उपप्रवशज, उपप्रवंश
के कुमार, भोगवशज, भोगवश के कुमार, भगवान् के वशज और भगवान्
के वश के कुमार, इक्ष्वाकु वशज, इक्ष्वाकु वशके कुमार, जातवशज,
जातवश के कुमार, कौग्व वशज कौग्व वश के कुमार, क्षत्रिय वशज,
क्षत्रिय वश के कुमार, शृग्वीर, योद्धा, प्रशस्तार (धर्मशास्त्रक पाठक)मल्लकी
(गजविशेष,) लेच्छकी (गजविशेष,) तथा अन्य बहुत से गणा, युवराज

तलत्र मडत्राविपति, कुटुम्बनायक, इभ्य (जिस के पास इतना मोना हो कि जिस सोने से हाथी टक सके वह) त्रेष्टि, नेनापति, और सार्यवाह वर्गैह न मुगिडत होकर गृहत्याग करके मुनि-दिक्षा स्वीकार की है। किन्तु मेरा दुर्भाग्य है, कि मैं यात्रा दीक्षा लेने के लिए समर्थ नहीं हूँ। हृदयानुप्रिय ! मैं आप के समीप पाच अणुव्रत (एकदेश अक्षिा, सत्यं, अमृत्यै, ब्रह्मचर्यं, और परिग्रह परिमाण) और सात शिक्षाव्रत (दि. व्रत, देशव्रत, अनैर्यदण्डव्रत, मामाधिकं प्रोषणोपवास, भोगोपभोग—परिमाण और अतिथिमविभाग) इस तरह वाग्द्वय प्रकार के गृहस्थधर्म को वारण करूंगा (भगवान् ने कहा) जिस प्रकार मुझ हो उसमें ढील न करो। तदनन्तर उम मुत्राहुकुमार ने, श्रमण भगवान् महावीर के समीप वाग्द्वय प्रकार के गृहस्थधर्म को—पचा-गुव्रत और मान शिक्षाव्रतों को— स्वीकार किया। स्वीकार करके उसी चार घंटोंवाले घोंडाके रथ पर सवार हुआ। सवार होकर जिन दिशा-जिन नरक से— आया था, उन्हीं दिशा— उन्हीं और— वापन चला गया ॥४८॥

मूलम्— नैरां कालेणं तेरां समणसं समणसस भगवओ महावीरसस जेठ्ठे अंतेवासी इंदभूती नामं अणगारे गोयमगो-त्ते रां सत्तुस्सेहे समचउरंससंठाणसंठिए वज्जरिसभनारायसं-वयणे कणगपुलगनिघसपस्सहगारे, उग्गतवे दित्ततवे तत्ततवे महातवे उराले घोरे घोरगुणे, धोरतवस्सी, धोरवंभचेरवासी उच्छूढसरीरे संखित्तविउल्लतेयलेस्से चोइसपुव्वी चउण्णाणो-वगए सव्वक्खरसन्निवाती समणसस भगवओ महावीरसस अदूरमासंते उड्डंजाणु अहोसिरे आणकोटोवगए संजमेरां तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ। तए णं से भगवं गोयमे जायसड्ढे, जायसंसए जायकोउहल्ले, उप्पन्नसड्ढे उप्पन्नसंसए उप्पन्नकोउहल्ले संजायसड्ढे संजायसंसए संजायकोउहल्ले

समुप्पन्नसङ्घे समुप्पन्नसंसए समुप्पन्नकोउहल्ले उट्टाए उट्टेइ,
उट्टाए उट्टेत्ता जेणेव समणे भगवं महावीरे तेणेव उवागच्छइ,
उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं निक्खुत्तो आयाहिणप-
याहिणं करेइ, करेत्ता वंदति, णमंसति । वंदित्ता णमंसित्ता
णत्तासन्ने णातिदूरे सुस्ससमाणे णमंसमाणे अभिसुहे विण-
एणं पंजलिउडे पज्जुवासमाणे एवं *वयासी ॥ ४९ ॥

भावार्थ— उसी काल के उसी समय मे श्रमण भगवान् महावीर के पट्टशिष्य इन्द्रभूति नामक अनगार-- जिनका गोत्र गौतम था । सात हाथ का शरीर था । जो समचतुस्र सस्थान और वज्रवृषभनाराच सहनन से युक्त थे । शरीर कसौटी पर घिसे हुए सोने या पद्म (कमल) सरीखा गोरा था । उग्र तपस्वी (अचिन्तनीय तप करने वाले) दीप्त तपस्वी (आग्नि-के समान कर्मरूपी वन को जलाने वला तप करने वाले) तप्ततपस्वी (कर्म-को तपाने वाली तपस्या करने वाले) महातपस्वी (निष्काम तपस्या करने-वाले) उदार और घोर (परिषह जीतने मे निर्दयी) थे । घोर-गुण शाली थे । घोर तप करने वाले थे । घोर ब्रह्मचारी थे । शरीर की मेवा शुश्रूषा-से रहित थे । अपनी विपुल तेजोलेश्या को सक्षिप्त करने-काम में नलाने-वाले थे । चतुर्दश पूर्व के ज्ञाता थे । चार-मति श्रुत अवधि और मन पर्यय-ज्ञानों को धारण करने वाले थे । सर्व ऋक्षों के उदात्तादि विद्वत्पों को जानने वाले थे । वे इन्द्र भूति गौतम, श्रमण भगवान् महावीर के पास- न बहुत दूर न बहुत पास- बैठे हुए थे । घुटने ऊपर की ओर तथा शिर नीचे किए हुए ध्यान रूपी कांठे में प्राप्त थे, सयम और तप के द्वारा आत्मा की भावना करते हुए विहार कर रहे थे । उसी समय इन भगवान् गौतम को तत्वों की श्रद्धा होने से, सशय (जिज्ञासा रूप) हुआ इसी कारण उन्हें कौ-तूहल पैदा हुआ । इस लिए वहा से उठ कर जहा श्रमण भगवान् महावीर

ये वहा आये । आकर श्रमण भगवान महावीर की दक्षिण दिशा में श्रा-
रम्भ कर के तीन प्रदक्षिणा दी । प्रदक्षिणा देकर स्तुति और नमस्कार
किया । स्तुति और नमस्कार कर के न बहुत पास और न बहुत दूर में
अर्थात् थोड़ी दूर में सामने शुश्रूषा और नमस्कार करने हुए प्रिय पूर्वक
हाथ जोड़ कर सेवा करते हुए, इन प्रकार बोले ॥४६॥

मूलम्— अहो णं भंते! सुवाहुकुमारे इट्ठे इट्ठस्सवे कंते
कंनस्सवे पिण पिणस्सवे मणुगणो मणुणस्सवे मणामे मणाम-
स्सवे सोमे सुभगे वि य दंसणे सुस्सवे बहुजणस्स वि य णं भंते,
सुवाहुकुमारे इट्ठे इट्ठस्सवे जाव सुस्सवे, साहुजणस्स वि य णं
भंते सुवाहुकुमारे इट्ठे इट्ठस्सवे जाव सुस्सवे सुवाहुणा भंते
कुमारेण इमेयास्सवा उराला मारुणस्सिद्धी किण्णा लद्धा किण्णा
पत्ता किण्णा अभिसमणणागया, के वा एस्स आसी पुच्चभवे
कि नामए वा किंवा गोएणं कयरंसि वा गामंसि वा सन्निवे-
संसि वा कि वा द्वा कि वा भोचा कि वा समायरित्ता कस्स
वा तहास्सवस्स समणस्स वा माहणस्स वा अतिण एगमवि
आयरियं सुवयणं सोचा निसम्म सुवाहुणा कुमारेण इमा
एयास्सवा उराला मारुणस्सिद्धी लद्धा पत्ता अभिस-
मणणागया ॥ ५० ॥

भावार्थ— हे भगवन्! यह सुवाहुकुमार बहुत में आदमियों को इष्ट,
इष्टरूप वाला, कान्त (मुन्दर), कान्तरूप वाला, प्रिय, प्रियरूप वाला, मनोज,
मनोजरूप वाला, मनोहर, मनोहररूप वाला, नोम्य, सुभग (सोभागवान्)
प्रियदर्शन (देखने में प्रिय) मुरूप लगता है, और हे भगवन्! यह
सुवाहुकुमार साधुजनों को भी इष्ट इष्टरूपवाला यावत् मुरूप लगता है। हे
भगवन्! सुवाहुकुमार को इष्टता, इष्ट रुचता यावत् मुरूपता, और हे भगवन्
इस तरह की उदार मनुष्य-मृद्धि का लाभ कैसे हुआ है? वह कैसे पाई है?

इसके सामने वह स्वय ही आई थी? पूर्वभव में यह कौन था ? इसका नाम क्या था? गोत्र क्या था? किस गाँव और किस जगह रहने वाला था? कौनसा दान देकर कौन से भोग भोगकर, कौनसा आचरण करके, किस श्रमण (साधु) या ब्राह्मण के पास, किस आचार सम्बन्धी णक भी वचन को सुनकर और हृदय में बरकर इस मुवाहुकुमार ने इस प्रकार की यह उदार मनुष्य ऋद्धि पाई है? या स्वय यह सामने आई है? ॥ ५० ॥

मूलम्— एवं खलु गायमा! तेणं कालेणं तेणं समएणं, ङ्हेव जम्बूदीवे दीवे भारहे वासे हत्थिणाउरे नामं नगरे होत्था । रिद्धित्थिमियसभिद्धे वन्नओ । तत्थ णं हत्थिणाउरे गागरे सुमुहे नामं गाहावई परिवसंति । अद्धे दित्ते विच्छिण्ण-विपुलभवणसयणासणजाणवाहणाहणणे बहुधणवहुजायरुव-रण आओगपओगसंपउत्ते विच्छड्डियपउरभत्तपाणे बहुदा-सीदासगोमहिसगवेलगप्पभृए बहुजणास्म अपरिभूए । तेणं कालेणं तेणं समएणं धम्मघोसा णामं थेरा जातिसंपरणा जहेव सुहम्मसामी तहेव पंचहि समणसतेहि सद्धि संपरिवु-डा पुच्चाणुपुच्चि चरमाणा गामाणुगामं दूहज्जमाणा जेणेव हत्थिणापुरे, जेणेव सहस्संववणे उज्जाणे, तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छत्ता अहापडिख्वं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरइ । तेणं कालेणं तेणं समए-णं धम्मघोसाणं थेराणं अंतेवासी सुदत्ते णामं अणुगारे उराले जाव संखित्ततेउलेस्से मासंमासेणं खममाणे विहरइ । तए णं से सुदत्ते अणुगारे मासक्खमणपारणगंसि पढमाण पोरिसीए सज्जायं करेति । वीयाए पोरिसीए आणं अिया-

१ म श २ उ ५ प सू० १०७ १०४- २ प ४ से प्रारभ

२ भग- समाप्त

गति । तद्व्याप्य पारिर्माण 'यम्मवांसे थरे' आपुच्छन्ति, आपु-
च्छित्ता हन्धिणाउरे नगरे अणुपविट्टे, उच्चर्नायमज्झिमाटं
कुलाटं वरममुदाणम्म अटमाणे सुमुद्धम्म गाहावतिम्म गिहं
अणुपविट्टे । तण णं मे सुमुद्धे गाहावटं सुदत्तं अणगारं
णज्जमाण पामट, पामित्ता हट्टतुट्टे जाय आसणातां अम्भुट्टे-
नि, अम्भुट्टित्ता पायपीठाओ पचोम्भेनि, पचोम्भित्ता पाउया-
ओ सुयति, सुदत्ता णगमाटियं उत्तगमंगं करेड, करेत्ता सुद-
त्तं अणगारं मत्तट्टपथाटं अणुगच्छट, अणुगच्छित्ता तिक्खु-
त्तो आयाहिणपयाहिणं करेड, करित्ता वंदट्ट णमंसट, वंदित्ता
णमंभित्ता जेणेव भत्तवरे तेणेव उवागच्छट, उवागच्छित्ता
मणं हन्थेणं विपुलेणं अमणपाणाखाटमसाटमेण
पटिलाभिम्मामि ति तुट्टे, पटिलाभेमाणो वि तुट्टे पटिला-
भिमिणत्ति तुट्टे । तण णं तम्म सुमुद्धम्म गाहावटम्म तेण दव्य-
सुद्धेणं दायगसुद्धेणं पत्तसुद्धेणं निविट्टेणं निक्कणसुद्धेण
सुदत्तं अणगारे पटिलाभिणं समणे समारे परित्तीकते
मणुम्माउण निवट्टे गिहमि य मे ट्माटं पंचदिव्याटं पाउम्भु-
याट । तंजहा—१ वसुद्धारा वुट्टा २ डम्मद्वयणे कुसुमे निवा-
तिते ३ चेलुकखेव कते ४ आहयाओ देवदुद्धीओ ५ अंत-
रा वि य णं आगामंमि "अहोदाणमहादाणं" वुट्टे य । हन्धि-
णाउरे मिवाटगजावपहेन्नु बहुजणो अणमणमम्म एव
आटम्भेड, एवं भाम्भट, एवं पक्षवेड, एव पस्सेड, धत्ते णं
देवाणुपिण सुमुद्धे गाहावटं सुकयपुत्रे कयलक्खणे सुल्लहे
णं मणुम्मज्जमे सुकयत्थरिद्धी य जाव तं धणणे ॥ ५१ ॥

भावार्थ— अमण भगवान् महावीर बोले- ह गौतम! उम कालके
उम समय में इनी जम्बूदीप नामक द्वीप में अगतक्षेत्र था । उम में

हस्तिनापुर नामक नगर था। वह ऋद्धि से परिपूर्ण- समृद्ध था। उसका विशेष वर्गन आपपातिकर मंत्र में है। उस हस्तिनापुर नगर में सुमुख नाम का गाथापति (मेठ) रहता था। वह वन वान्य से परिपूर्ण, विस्तृत और बड़े बड़े भवन, शय्या, आसन, यान, आग वाहना से युक्त था। बहुत स धन और सुवर्ण से परिपूर्ण था। उसी समय जानिसम्पन्न (जिन का मातृपक्ष शुद्ध था), प्रोग सुवमारामा की नाई पाच नौ व्रतणा से सावर— उन से विंगे हुए-वर्मवोप नामक स्थविर् अनुक्रम से चलते हुए, एक गाव से दूसरे गाव होकर, हस्तिनापुर में जिन और 'सहस्राक्ष वन' नामक उद्यान था, उसी ओर आये। आकर यथायोग्य आत्रा लेकर नयम और तप से आत्मा का चिन्तन करते हुए विहार करने लगे। उमा कालके उसी समय वर्मवोप स्थविर् के शिष्य, उत्तर ओर यावन अपना तेजोनेश्या श्लो मन्त्रिष्ठ करने वाले मुत्त नामक व्रतगार महीने महीने में पागणा करते हुए विहार कर रहे थे। उस के बाद वह मुत्त व्रतगार एक महीने के पागणे के दिन, पहले पहर में सज्जाय (साव्याय) करके दूसरे पहर में वर्मव्यान और तीसरे पहर में वर्मवोप स्थविर् से अथात् अपने गुरु में आज्ञा लेकर हस्तिनापुर नगर में घुमे। वहाँ ऊच नाच और मध्यमकुट्ट वाले घर में भिक्षा के लिए प्रमते प्रमते सुमुख नामक गाथापति (प्रतिष्ठित माहृकार) के घर में प्रवेश किया। सुमुख गाथापति ने मुत्त व्रतगार को आते हुए देखा। देखकर हर्षित और सन्तुष्ट होकर यावत् आसन से उठ बठा। उठकर आसन से उतरा। उतरकर पौवडी उतारी। पौवडी उतरकर एक दृष्टा डाला, दृष्टा डालकर सात आठ हाथ नामने गया, और वहाँ जाकर दक्षिण दिशा से प्रारम्भ करके तीन प्रदक्षिणाएँ दा। वन्दना की और नमस्कार किया। वन्दना और नमस्कार करके भोजनशाला की ओर आया। वहाँ आकर 'अपने हाथ से अन्न पान खाद्य और स्वाद्य— चांगे प्रकार के— आहार का ढान दूगा' ऐसा सोचकर प्रसुद्धित हुआ। देते समय आनन्दित

हमा और देकर भी सन्तुष्ट हुआ । उस सुमुख गाथापति न शुद्ध द्रव्य (देय) शुद्ध दाता शुद्ध पात्र होत तथा तीन करण और तीन योगों का शुद्धि-पूर्वक मुदत्त अनगार को आहाग-दान देकर यमाग हलका किया—कमकिया— और मनुष्य आयु का वन्द्य किया, तथा उस के धर पाच दिव्य प्रगट हुए । व इस प्रकार है—१ चारह करोट सुवर्ण दानाग की वण हुई, २ पाच वर्ण के फलों की वृष्टि हुई ३ सुगविनपत्रों की वृष्टि हुई ४ आकाशमें देव दुन्दुभिका शब्द हुआ ५ प्राकाशमें "अहोदान'अहोदान" शब्द हुआ । हस्तिनापुर में निरन्तों चोगस्तों यात्रत नदकों पर अथान जगह २ अनेक मनुष्य आपन में इस प्रकार वानचीत करन लगे इस प्रकार भाषण करने लगे इस प्रकार प्रतिपादन करन लगे, इस प्रकार प्रणयन करन लगे—यह दवानुप्रिय सुमुख गाथापति वन्द्य है । पुण्यवान है । सुलक्षण है । शुभकर्म का लाभ उसे हुआ है । मनुष्यजन्म और उत्तम ऋद्धिवाला यावत यह वन्द्य है ॥ ५१ ॥

मूलम्— से सुमुद्रे गाहावई वृद्धं वाससयाडं आउयं पालेति । पालित्ता कालमासे कालं किञ्चा इहेव हन्विसीसे णगरे अदीणसत्तुस्स रण्णो धारिणीए देवीए कुच्चिद्धसि पु- तत्ताए उववण्णो । तए णं सा धारिणी देवी सयणिज्जंमि सुत्तजागरा ओहीरमाणी शतहेव सीहं पासइ । मेसं तं चैव जाव उप्पिपासायवरगने विहरइ । त एव खलु गोयमा । सुवाहुणा इमा ण्यास्सुवा माणुस्सरिद्धी लद्धा पत्ता, अभिस- समन्नागया । पइ णं भंने । सुवाहुकुमारे देवाणुप्पियाणं अ- तिणमुंदे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पट्टवइत्तए ? हंता प- भू । तने णं मे भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदइ , नमंसइ । वंदित्ता नमंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भा- वेमाणे विहरति । तए णं मे समणेभगवं महावीरे अणयया

कयाद् हत्थिसीसाओ नगराओ पुष्पकरंडाओ उज्जाणाओ
 कयवणमालप्पियजक्खस्स जक्खायतणाओ पडिणिक्ख-
 मति । पडिणिक्खमित्ता वहिया जणवधविहारं विहरइ । तते
 णं से सुवाहुकुमारे समणावासए जाते अभिगयजीवाजीवे
 उवलद्धपुत्रपावे आसवसंवरणिज्जरकिरियाहिगरणबंधमोक्ख-
 कुसले असहिज्जदेवतासुरनागसुवण्णजक्खरक्खसकिन्नर-
 किपुरिसगरुलगंधव्वमहोरगाइएहि देवगणेहि निगंथाओ
 पावयणाओ अणइक्कमणिज्जे निगंथे पावयणे निस्संकिए
 निक्कंखिए निव्वित्तिगिच्छे लद्धेट्ठे गहियट्ठेपुच्छियट्ठे अहि-
 गयट्ठे विणिच्छियट्ठे अट्ठिमिजपेम्माणुरागरत्ते अयमाउसां
 णिगंथे पावयणे अट्ठे अयं परमट्ठेसेसे अणट्ठे ऊसियफलि-
 हे अवंगुयदुवारे चियत्तंतेउरघरप्पवेसे बह्हि सीलव्वयगुणवेरम-
 णपच्चक्खाणपोसहोववासेहि चाउहसट्ठमुट्ठिपुण्णिमासिणासु
 पडिपुगणं पोसहं सम्मं अणुपालेमाणे समाणे निगंथे फासु-
 णसणिज्जेणं असणपाणखाइमसाइमेणं वत्थपडिग्गहकंवल-
 पाघपुंछणेणं पीढफलगसिज्जामंथारएणं ओसहभेसज्जेण य
 पडिलाभेमाणे अहापरिग्गहिएहि तवोकस्सेहि अणपाण
 भावेमाणे विहरइ ॥२२॥

भावार्थ— वह सुमुख गायत्रीपति बहुत दिना तक जीवित रहा ।

अन्त मे काल करके- मर्क- इसी हस्तिशीर्षि नगर म अदीनअत्रु गजा के
 यहा धारिणी देवी की कृष् से, पुत्र रूप से उत्पन्न हुआ है । जब यह गर्भ मे आया
 तत्र उस महागनी वागिणी ने शय्या पर कुच्छ सोते और कुच्छ जागते हुए—
 अर्द्धनिद्रा— मे जागने के समय पहले कह अनुसाग सिंह को मपन म दखा
 था । जेप पूर्व के नमान समझना, यावन् ऊचे प्रामाद मे गहन लगा । सो ह

गौतम^१ मुत्तहकुमार ने इस प्रकार यह अनुभव- ऋद्धि पाई है, वह मन्मथ आर्ट है। गौतम स्वामी बोले ह भगवन् मुत्तहकुमार क्या आप के समीप मुडित होकर, वर से निकल कर, माधु- दीया लेने का समर्थ है भगवान बोले - हाँ, समर्थ है।

तत्पश्चात् भगवान गौतम ने श्रमण भगवान महावार को बन्धना की ओर नमस्कार किया। बन्धना और नमस्कार करके १७ प्रकार के मथम और १२ प्रकार के तप पूर्वक आत्मचिन्तन करने हुए विहार करने लगे। तदनन्तर श्रमण भगवान महावार हस्तिशर्षि नगर के पुषकर झील उद्यान के, कृतवन्तगारप्रिय यक्ष के, यक्षायतन में निकल, और निकलकर नान्य देशों में विहार करने लगे। अब वह मुत्तहकुमार था। उक्त दुःख उन्मत्त जीव और अजायतन्वों का जाना पुण्य और पाप को जाना, आश्रम- मथ- निर्दिष्ट क्रियाविक्रम- तप और मास के जानने में कुशल हुआ। उसे कोई भी सम्पन्न में विचलित नष्ट कर सकता था। इस मन्मथकुमार नागकुमार ज्यातिपदेव यक्ष गक्षम किल्ल किम्पुरुष गरुडव्यज (मुत्तहकुमार) गन्धर्व महीगन आदि देश के समूह की महायता न लेने वाला था। और व उस में निर्ग्रन्थ प्रवचन का उल्लंघन नष्ट कर सकत थे उसे निर्ग्रन्थ प्रवचन में शक नष्ट था। अन्य दर्शना (मता) की आभाशा नष्ट थी। ज्ञानादि के फल में उसे शक नहीं था। उन्मत्त जीव। १८ तन्वा को मुत्ता, उन के अर्थ को जाना, प्रज्ञा और निश्चय किया तथा उन का तात्पर्य जान लिया था। उसकी हृदिया और मजा, सर्वज्ञदेव के वचन के प्रेम अनुगम में ही अनुक्त थी। ह आयु मन्मथ यह सोचा करता था, कि निर्ग्रन्थ प्रवचन ही अर्थ है। यही परमार्थ है, और जोप सब अनर्थ है। उस के मरान का आगल (भागल-भोगल वैडा) अलग पडा रहता था। दग्वाजा गुण पडा रहता था। वह यदि तमगे के अन्त पुग या वर में जाना तो उन्हें अल्ला लगता था, अथात् उनपर

किर्मा का अविश्वाम नहा या । अथवा उमने तमर्ग के अन्तःपुर और
 घर म जाना आना छोड दिया या, वह शीलव्रत, गुणव्रत, वेगमण (गण्डेष-
 आदि की नियुक्ति), प्रत्याख्यान (पौरुसी आदि) और पोषध उपवास करता
 या चतुर्दशी अष्टमी अमावस्या और पूर्णिमा के दिन पूर्ण पोषध अच्छी तरह
 पालन करता या । निर्प्रन्थ मुनियो को प्रामुक्त-निर्दोष अशन पान, खाद्य
 और स्नान, तथा रत्न, पात्र, कवच, गजोदरग वाज्रौठ पाटिया, ज्य्या, और
 गणग, तथा औषध भेषज आदि दान करता हुआ, स्वीकार किए अनुमा-
 त्त आदि क्रियाओ को करके आत्मा का चिन्तन करता रहता या ॥५२॥

मूलम्— तते णं से सुवाहुकुमारं अण्णया कथाडं चाउ-
 दमदृमुह्निदृपुण्णमासिणीसु जेणेव पोसहसाला, तेणेव उ-
 वागच्छइ । उवागच्छिता पोसहसालं पमज्जति । पमज्जिता
 उच्चारपाम्भवणभूमि पडिन्नेहेट । पडिलेहत्ता दवभसंधारं
 संथरेड । संथरित्ता दवभसंधारं दुस्सहइ । दुस्सहित्ता अट्टम-
 भत्तं पगिणहत्ति । पगिणित्ता पोसहसालाण पोसहित्ते अट्टम-
 भत्तिण पोसहं पडिजागरमाणे विहरति । तते णं तस्स सुवा-
 हुकुमारस्स पुच्चरत्तावरत्तकालसमयसि धम्मजागरिणं
 जागरमाणस्स डमेयास्सुवे अज्झत्थिण चित्तिण मणोगते संक-
 प्पे, धण्णा णं ते गामागरनगरखेडकच्चडोणमुहपट्टणाआ-
 समणिगमसंवाहसण्णिवेसा जत्थ णं समणं भगवं महावीरे
 विहरति । धण्णा णं ते राईसरतलवरमाडंविद्यकोटुंविद्यदवभ-
 सेट्टिमेणावडसत्थवाहप्पभिडओ समणस्स भगवओ महा-
 वीरस्स अंतिण मुंडा भवित्ता अगाराओ अण्णगारिणं पच्चयं-
 ति । धण्णा णं ते राईसरतलवरमाडंविद्यकोटुंविद्यदवभसे-
 ट्टिमेणावडसत्थवाहप्पभिडओ, जे णं समणस्स भगवओ
 महावीरस्स अंतिण पंचाणुच्चयाटं जाव गिद्धिधम्मं पटिवज्जति ।

धणणा गां ते राईसरतलवरमाडंविद्यकोडुंविद्यद्वभमेद्विसेणा-
 वदसत्थवाहृप्पभिद्वओं जे णं समणस्स भगवओ महावीरस्म
 अंतिण धम्मं सुणेति । तं जड णं समणे भगवं महावीरे
 पुव्वाणुपुव्वि चरमाणे गामाणुगामं दृढज्जमाणे दृढमागच्छेज्जा
 जाव विहरिज्जा तते णं अदं समणस्स भगवओ महावीरस्म
 अंतिण मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वणज्जा ॥ ५३ ॥

भावार्थ—उमके वाट वह मुवाहुकुमार, किमी समय चतुर्दशी, अष्ट-
 मी, अमावस्या और पूर्णमासी के दिन पोषवशाला में आया । वहा आकर
 पोषवशाला को प्रमार्जित किया (प्रजा) जोच और लघुशका करने के स्थान
 का प्रतिनिधत्वन किया- अच्छी तरह देखा भाला । देवभालकर टाम(द्व)
 का आमन विद्याकर, उमी आमन के ऊपर बैठा । बैठकर अष्टभक्तव्रत का
 पालन किया । उम के वाट किमी समय मुवाहुकुमार आयी गन के
 समय वर्ष जागण कर रहा था । उम समय, उसे उम प्रकार का अत्यात्मि-
 क पित्राग पैदा हुआ-वह गाव आकर (जहाँ नमक आदि की खान हो वह)
 नगर, गेट (जहा बन्दु का किला हो वह) कर्बट (कुमार) मटम्प (जि-
 म के आमपाम दूमगी वर्ती न हो वह) ट्रोणमुव (जल और स्थलमार्ग
 वाला नगर) पत्तन(स्थलमार्ग या जलमार्ग से गम्य और व्यापार का केन्द्र
 अथवा रत्नभूमि) आश्रम (तपस्वी आदि का निवासस्थान) निगम(व्यापा-
 रिक शहर) तथा मवाह (पर्वत के ऊपर या किले के अन्तर्ग का गाव)
 मन्त्रियेज (पुरा टोला मोहल्ला)आदि वन्य है । जहा श्रमण भगवान् महा-
 वीर विहार करते हैं । और वह राजा राजकुमार तलवर मटवराज कौटु-
 म्बिक उभय श्रेणी सेनापति और मर्यादाह वगेरह भी वन्य है जो श्रमण
 भगवान् महावीर के समीप मुण्डित होकर गृहस्थी से अनगागपन वारण
 पहिले दिन एकाशन कर के, तीन दिन उपवास करना, फिर
 अगले दिन एकाशन करना अष्टभक्त व्रत होता है । क्योंकि उम में
 अष्ट-आठ वार का- भक्त-भोजन का त्याग किया जाता है ।

करते हैं। तथा वे राजा राजकुमार तलवर मडवराज कोटुम्बिक इभ्य श्रेष्ठी, मेनापति आर सार्यवाह वगैरह भी धन्य हैं। जो श्रमण भगवान् महावीर के समीप गृहस्थ वर्म स्वीकार करते हैं। तथा वे राजा राजकुमार तलवर मडवराज कोटुम्बिक इभ्य श्रेष्ठी मेनापति सार्यवाह वगैरह भी धन्य हैं, जो श्रमण भगवान् महावीर स्वामी के समीप वर्मोपदेश मुनते हैं। इसलिए यदि श्रमण भगवान् महावीर पूर्वानुपूर्वी से चलते हुए प्रामानुग्राम विहार करते हुए, यहाँ आवगे, यावत् विहाग करगे, तब ही भे श्रमण भगवान् महावीर के समीप, मुण्टित होकर, गृहस्थी त्यागकर मुनि-दीक्षा वागण करेगा ॥५३॥

मूलम्— तते णं समणे भगवं महावीरे सुवाहुस्स कुमारस्स इमं एयारुवं अज्झत्थियं जाव वियाणित्ता पुव्वाणुपुव्वि चरमाणे गामाणुगामं दुइज्जमाणे जेणेव हत्थिसीसे गागरे जेणेव पुप्फकरडगउज्जाणे वण्णओ, कथवणमालप्पियस्स जक्खस्स जक्खवायतणे वण्णओ, तेणेव उवागच्छड। उवागच्छित्ता अहापडिरुवं उग्गहं उग्गिण्हित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणे विहरति। तहेव परिसा राया निग्गता। तते णं से सुवाहुकुमारे तं महया जहा पढमं तहा निग्गओ। धम्ममाडक्खड, तंजहा— सव्वओ पाणातिवायाओ वेरमणं, सव्वओ मुसावायाओ वेरमणं, सव्वओ अदिन्नाटाणाओ वेरमणं, सव्वओ मेहुणाओ वेरमणं, सव्वओ परिग्गहाओ वेरमणं। तेण णं सा महत्तिमहालिया मणूसपरिसा समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिण धम्मं सोच्चां तहेव परिसा राया पडिगया ॥ ५४ ॥

१ उववाइ प ८०-० प १ से

२ उववाइ समाप्त

भावार्थ— तत्पश्चात् ही श्रमण भगवान् महावीर ने सुत्राटकुमार के इस प्रकार के आध्यात्मिक विचारको पावन जानकर, अनुक्रम में चलते हुए ग्रामानुग्राम विहार करने हुए हस्तिनशीर्ष नगर में, पहले वर्णन किये हुए पुण्यकण्ठ उद्यान में जो कृतयनमालप्रिय पक्ष का पञ्चायतन था, उस में—जिसका कि वर्णन पहिले किया चुका है— आये। अरु यथाचित आज्ञापूर्वक स्नान लेकर, समय और तप पूर्वक आत्म-चिन्तन करते हुए विहार करने लगे। पहले का नाई पण्डित (जन समूह) और गजा वन्दना करने के लिए निकला। बाद में सुत्राटकुमार बड़े शान्ति से पहले की तरह वन्दना करने निकला। भगवान् महावीर ने इस प्रकार वर्णोपदेश दिया—सब प्रकार के प्राणानिवात (हिमा) से रहित होना, सब तरह के असत्य वचनों का त्याग करना, सब तरह के अदत्तादान से रहित होना, सब प्रकार के मथुन से विरक्त होना और सब तरह के परिग्रह से रहित होना ये पांच महाव्रत हैं। अनन्तर वह बहुत बड़ा जन-समुदाय और गजा, श्रमण भगवान् महावीर से वर्णोपदेश सुनकर पहले की तरह वापस चला गया ॥५४॥

शूलम् — तते णं से सुत्राटकुमारे सभगास्स भगवओ महावीरस्स अंतिग् धम्मं सोच्चा निसस्स हट्ट तुट्ठे संमणं भगवं महावीरं निक्खुत्तो आयाहिण्ण पयाहिण्णं करेड, करेत्ता वंदेड नसंस्सड, दंदित्ता नसंसित्ता, एवं वयासी—सहहामि णं भंते ! निग्गंयं पावयणं, एवं पत्तिगामि णं, रोएमि णं, अब्बुट्ठेमि ण भंते ! गिग्गंयं पावयणं, एवमेयं भंते ! तहमेयं भंते ! अविनहमेयं भंते ! इच्छियमेयं भंते ! पडिच्छियमेयं भंते ! इच्छियपडिच्छियमेयं भंते ! से जहेव तं तुब्भे वद्ध । जं नवरं- देवाणुप्पिया! अम्मापियगं आपुण्हामि ।

ततो पच्छा देवानुप्पियाणं अंति ए सुंदे भवित्ता णं अगारा-
ओ अणमारियं पव्वडस्सामि । अहासुहं देवानुप्पिया! मा
पडियंधं करेह ॥ ५५ ॥

भावार्थ— तदनन्तर सुबाहुकुमार ने श्रमण भगवान् महावीर के
समीप धर्मोपदेश सुनकर, उसे हृदय में धारण करके, हर्षित और सन्तुष्ट
होकर, श्रमण भगवान् महावीर को, तीन वाग दक्षिण दिशासे शुरू कर के
प्रदक्षिणा की । प्रदक्षिणा करके वन्दना और नमस्कार किया । वन्दना
और नमस्कार करके इस प्रकार बोला-- हे भगवन्! मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन
में श्रद्धा रखता हूँ, प्रतीति करता हूँ, वह मुझे रचता-- भला लगता है ।
हे भगवन्! मैं इस निर्ग्रन्थ प्रवचन को स्वीकार करता हूँ ।
हे भगवन्! निर्ग्रन्थ प्रवचन यही है, यह उम्मी प्रकार है, जैसा आपने कहा
है । यही तथ्य —सत्य— है । हे भगवन्! यह अन्यथा नहीं है । हे
भगवन्! यही उष्ट है । हे भगवन्! यही अभीष्ट है ।
हे भगवन्! यही उष्ट-अर्भाष्ट है । यह सब ठीक है, जो
कि आपने कहा है, किन्तु हे देवानुप्रिय! उतना विज्ञेय है कि मैं अपने
माता पिता से पृच्छता हूँ, और पृच्छने-आज्ञा लेने-के अनन्तर आपके पास
मुगिडत हाकर, गृहस्थी को त्याग कर मुनि दीक्षा स्वीकार करूंगा ।
भगवान् महावीर बोले-- हे देवानुप्रिय! जिस प्रकार सुग्ग की प्राप्ति हो,
उम में टील न करो ॥ ५५ ॥

मूलम्— ततो णं से सुबाहुकुमारो समणं भगवं महा-
वीरं वंदति णमंसति, वंदित्ता णमंसित्ता जेणेव चाउग्घंटे
आसरहे, तेणेव उवागच्छइ । उवागच्छित्ता चाउग्घंटे
आसरहं दुरूहति, दुरूहित्ता महया भडचडगरपहकरेणं
हत्थिसीसस्स नगरस्स मज्झमज्झेणं जेणामेव सए भवणे

१ वारं वार उष्ट या भाव पर्वक स्वीकृत किया ।

तेणामेव उवागच्छह, उवागच्छिता चाउग्यंटाओ आसग-
हाओ पचोम्हइ । पचोरुहित्त। जेणामेव अम्मापियरो तेणा-
मेव उवागच्छह, उवागच्छिता अम्मापिऊणं पायवडणं करेह,
करेत्ता एवं वयासी—एव खलु अम्मयाओ! मए समणस्स
भगवओ महावीरस्स अतिए धम्मं गिसंते, से वि य धम्मं
मे इच्छिए पडिच्छिए अभिम्हण । तते णं नम्म सुवाहुम्म
कुमारस्स अम्मापियरो सुवाहुकुमार एवं वयासी—धत्तोमि
णं तुमं जाया संपुण्णो० कयत्थो० कयलक्खणोमितुम जाया, जे
णं तुमे समणस्स भगवओ महावीरस्स अतिए धम्मं गिसंते
से वि य ते धम्मं इच्छिए पडिच्छिए अभिम्हण । तते ण
मे सुवाहुकुमारे अम्मापियरो टोच्चंपि तच्चंपि एवं वयासी—एव
खलु अम्मयाओ! मए समणस्स भगवओ महावीरस्स अतिए
धम्मं गिसंते, से वि य धम्मं इच्छिए पडिच्छिए अभिम्हण न
इच्छामि णं अम्मयाओ! तुव्भेहि अब्भणुत्ताए समाणे समणस्स
भगवओ महावीरस्स अतिए मुंडे भवित्ता णं अगाराओ अण-
गारियं पव्वहत्तए । तते ण धारिणी देवा न अणिट्ठं अकंतं
अपियं अमणुत्तं अमणामं अस्सुयपुव्वं फरुसं गिर सोच्चा
णिसम्म इमेणं पयास्सवेणं मणोमाणसिएण सहया पुत्तट्ठ-
क्खेणं अभिभूता समाणी सेयागयरोमकूवपगलंतविलीण-
गाया सोयभरपवेवियंगी णित्तेया, दीणविमणवयणा करयल-
मलियव्व कमलमाला तक्खणओ लुगदुव्वलमरीग लाव-
न्नसुत्तणिच्छायगयसिरीया पसिद्धिलभूत्तणपडनस्सुम्मियसच्चु
त्तियधवलवलयपव्वमट्टउत्तरिज्जा मूमालविकिन्नकेसहत्था मु-
च्छावसणट्टचेयगरुई परसुनियत्तव्व चंपगलया, णिव्वत्तमह-
व्व इंदलट्ठी, विमुक्कमंधिवंधणा कोट्टिमतलंसि सब्वगेहि

धसन्ति पडिया । तते णं सा धारिणी देवी ससंभमोववत्तियाए
 तुरियं कंचणभिगारमुहविणिग्गयसीयलजलविमलधाराए
 परिसिचमाणा निव्वावियगायलट्टी उक्खेवगतालविटवीयण-
 गजणियवाएणं सफुसिएणं अंतोउरपरियणेणं आसासिया
 ममाणी मुत्तावलिसन्निगासपवडंतअंसुधाराहिं सिचमाणां
 पओहरे, कल्लुणविमणदीणा रोयमाणी, कंदमाणी, तिप्पमाणी,
 सोयमाणां विलवमाणां सुवाहुकुमारं एवं वयासी ॥५६॥

भावार्थ— इसके अनन्तर सुवाहुकुमार न श्रमण भगवान् महा-
 वीर को वन्दना की और नमस्कार किया । वन्दना और नमस्कार करके,
 जियर चाग घटोंवाला ग्य था, उधर आया । आकरके, चाग घटोंवाले रथ
 पर सजाग होकर, बहृत से मुभट और चारुगें सहित, हस्तिशीर्ष नगर
 क बीचों बीच होकर अपने भवन की तरफ आया । आकर चाग घटेवाले
 ग्य मे उतर कर, जिम ओग माता पिता थे, उस ओग प्राया । आकर
 माता पिता को प्रणाम करके इस प्रकार कहने लगा- — हे माता पिता!
 मेने श्रमण भगवान् महावीर के समीप धर्मोपदेश मुना है, उस धर्म की मे
 इच्छा करता हूँ, और वाग वाग इच्छा करता हूँ । मुझे वह रुचता है ।
 यह मुनकर सुवाहुकुमार के माता पिता सुवाहुकुमार से इस प्रकार बोले-
 हे पुत्र! तुम वन्य हो, पुण्यवान् हो, कृतार्थ हो, और हे पुत्र! तुम शुभ-
 लक्षण हो, क्योंकि तुमने श्रमण भगवान् महावीर के समीप धर्म श्रवण
 किया है, और वह धर्म तुम्हें उष्ट और अभीष्ट तथा रुचिकर हुआ है ।
 अनन्तर सुवाहुकुमार ने माता पिता से दो तीन बार कहा, कि हे माता पिता!
 मे न श्रमण भगवान् महावीर के समीप धर्म श्रवण किया है, और वह
 धर्म मुझे उष्ट, प्रत्यंत उष्ट तथा रुचिकर हुआ है । इस कारण हे माता
 पिता ! मे आपकी आज्ञा लेकर, श्रमण भगवान् महावीर के समीप,
 मुण्डित हो कर, धर से निजल कर मुनि-दीक्षा लेना चाहता हूँ । धारिणी

देवी उन अनिष्ट असुख, अप्रिय असन्तोष अन्विष्ट अशुभपूर्व (जिसे पहले महा मुना जैसे) ग्री कृष्ण वचने को सुनकर और हृदय में वाग्गु कर के उन प्रकार पुत्र के मानसिक शोक में महादुःखी हुई । रोम रोम से निकलते हुए पत्नीन से जगत् भाग गया । शोक में शरीर थर थर कापने लगा, चेहरा पीला पड़ गया, दीन और बेमुझ से समान वचन बोलने लगी । वह जैसे मुग्धा गई, जैसे तार से ममलने से कपल की माला मुग्धा जाती है । पी पी लेना चाहता है वह मुनने समझी । उनका शरीर निर्मल रंग हो गया । उनका शरीर लाजव गन्ध हो गया और उमकी शोभा नष्ट हो गई । दुर्जे होने से शरीर धीरे धीरे गं । नफेद चूटिया गनी पर ना गिरी और दृष्टर चर चर हो गई । ओटना शरीर से दूर हो गई, नाप नगम शि के दान धवा उद्य विरग गं । मृच्छां अने से चेतना नष्ट हो गई । शरीर भारी हो गया । फरमे से गोदीगई चम्पक लता की नाई श्री उमज समात होने पर उच्छ-लम्भ की तरह शोभा रहित हो गई । "नी के शरीर का मन्दिग (जोड़) टीनी होने से नाग शरीर बटा से पागन से गिर पडा मथान वह गनी जाती पर गिर पडी । गना जन अशुल विर होजा जाती पर गिर गई तत्र डाम्पियो ने उन्दी ही मोने की भरी क मुा ने निकलता दुड निर्मल शीतल जट की वरा से उन के शरीर का माचकर बटा क्रिया । फिर अम आदि के पने की उडा गाने नालवृक्ष के पने के बीजन (पुगी) से पानी का बोने मन्दि हवा जरके शान्त शिवा । शान्त होनपर मोलियो का प्रति उनी निकलकर गिरती हुई पासुओ के वागश्री से कुचो का निचन करने लगी । दयावार उदास और दीन होनी हुई, गेनी हुई, चिरुहारी हुई पर टपका कारेनी हुई, शोक करती हुई, और विलाप करती हुई मुत्रादुःखाम्ने उन प्रकार रहने लगी ॥५६॥

सूलम्— तुम्हंसि णं जाया अम्हं एगे पुत्ते, इट्ठे, कंते, पिए, मणुत्ते, मणामे, धिजे, वेसासिए, सम्मए, बहुमए, अणुमए भंडकरंडगसमाणे, रयणे, रयणभूते, जीविघउस्सासए, हिययाणंदजणणे, उंवरपुप्फं व दुल्लहे सवणयाए, किमंग पुण पासणयाए, णो खलु जाया अम्हे इच्छामो खणमवि विप्पओगं सहित्तए, तं भुंजाहि ताव जाया! विपुले माणुस्सए कामभोगे जाव, ताव वयं जीवामो। तओ पच्छा अम्हेहि कालगतेहि, परिणयवए वड्ढियकुलवंसतंतुकज्जंमि निरावयक्खे, समणस्स भगवओ महावीरस्स अंतिए सुंढे भवित्ता आगाराओ अणगारियं पव्वइस्ससि ।

तते णं से सुवाहुकुमारे अम्मापिऊहि एवं वुत्ते समाणे अम्मापियरो एवं वयासी—तहेव णं तं अम्मताओ जहेव णं तुम्हे ममं एवं वदह “तुमंसि णं जाया! अम्हं एगे पुत्ते तं चेव जाव निरावयक्खे सणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइस्ससि” एवं खलु अरमयाओ माणुस्सए भवे अयुवे अणियए आसासए, वसणसउवदवाभिभूते, विज्जुलयाचंचले अणित्ते जलवुव्वुघसमाणे कुसग्गजलविदुसन्निभे, संज्जवभरागसरित्ते, सुविणदंसणोवमे सडणपडणविद्धसणधम्मे पच्छापुरं च णं अवरसविप्पजहणित्ते, से के णं जाणंति अम्मयाओ! के पुव्वि गमणाए, के पच्छा गमणाए । तं इच्छामि णं अम्मयाओ! तुम्हेहि अब्भणुत्ताए समाणे समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइत्तए । तते णं तं सुवाहुकुमारं अम्मापियरो एवं वयासी ॥ ५७ ॥

भावार्थ— बेटे! हमारे तुम इकलौते लडके हो और इष्ट कान्त प्रिय मनोज्ञ मनोरम धीरज बधाने वाले, विश्वास-पात्र मानने योग्य बहुत

मानने योग्य सम्प्रति देनेवाले अनुमत्त (कार्य होने क बाद भी मानने योग्य) आभरण के पिटारे जैसे, ग्त्र तथा मनुष्य जाति में ग्त्र जैसे हो। मों जीपन क श्याम हो, हृदय को आनन्द देने वाले हो। ऊपर क कुल की नाई, देखना तो दूर रहा तुम्हाग नाम मुनना भी मुश्किल हो जायगा। सत २ पुत्र! हम तेरा प्रियोग, एक शरण भग भी नशा नहीं करना चाहते। तमलिष्ट बेटे! जस तक हम जीते हैं, तबतक मनुष्यों के अनेक भोगोपभोग भोगो। हमारे मन के बाद परिपक्व अस्था पाकर, कुल की श्रद्धि करने वाले पुत्रपौत्रों को बढाकर सब प्रयोजन साधकर श्रमण भगवान् महार्थों के समीप मुण्डित होकर सब छोड़ साधुपना लेलेना।

माता पिता के पंसा कहने पर मुत्राट्टकुमार माता पिता से कहने लगा, हे माता पिता! जो आपने कहा है 'हमारे तुम डरलौते बेटे हो यावत् हमारे मने के बाद सब प्रयोजन साधकर श्रमण भगवान् महार्थों के समीप यावत् दीक्षा लेना'। सो हे माता पिता! यह मनुष्य भवसदा टिकने वाला नहीं है। नियत नहीं है। एकदा शरण म नष्ट हो सकता है। मैकड़ों व्यसनों—जुआ चोरी आदि के उपद्रवों में भग है। त्रिजली का नाई चपट है। अनिष्ट है। पानी के बुलबुले की तरह या दूध के ऊपर ठहरी हुई पानी का बूट का नाई चपल है। मन्व्या समय की लक्ष्मि और स्वप्न दर्शन की तरह शक्तिरु है। नष्टकर चलना नष्ट होने ही शरीरका स्वभाव है। पहले या पीछे—कभी न कभी हम अशुभ ही होना होगा। हे माता पिता! यह कौन जानता है कि माता पिता और पुत्र में कौन पहले या कौन पीछे भोगा? उर्मानिष्ट हे माता पिता! आप का आज्ञा लेकर श्रमण भगवान् महार्थों के समीप दीक्षा लेना चाहता।

यह मुनकर माता पिता मुत्राट्टकुमार से कहने लगे ॥ ५७ ॥

मूलम्— इमाञ्जो ते जाया! सरिमियाञ्जो सरित्तया-
आं सरिच्चयाञ्जो सरिसलावन्नरूपजोव्वणगुणोव्वेघाणां

सरिसेहितां रायकुलेहितो आणिल्लियाओ भारियाओ, तं भुंजाहि णं जाया! एताहि मद्धि विउले माणुस्सएकामभोगे, तओ पच्छा भुत्तभोगे समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वइस्ससि ।

तते णं से सुवाहुकुमारे अस्मापियरं एवं वयाली-तहेव णं अम्मयाओ! जणं तुब्भे ममं एवं वदह “सरिसियाओ जाव समणस्स० पव्वइस्ससि” एवं खलु अम्मयाओ! माणुस्सगा कामभोगा असुई, असासया, वंतासवा, पित्तासवा, खेलासवा, सुक्कासवा, सोणियासवा, दुरूस्सासनीसासा, दुरूयमुत्तपुरीसपूयवहुपडिपुत्ता उच्चारपासवणखेलजल्लसिंघाणागवंतपित्तसुक्कसोणियसंभवा अधुवा अणितिया असासया, सडणपडणविट्ठंसणाधम्मा, पच्छा पुरं च णं अवस्सविप्पजहणिज्जा, से के णं अम्मयाओ! जाणंति, के पुव्वि गमणाए के पच्छा गमणाए, तं इच्छामि णं अम्मयाओ! जाव पव्वइत्तए ॥ ५८ ॥

भावार्थ— हे पुत्र! यह तेर सरीखी, तेरी त्वचा के समान त्वचा वाली समान उम वाली ममान लावण्यरूप यौवन और गुणों से युक्त अपने समान गजकुलो से लाई हुई पाच सौ पत्नियों को भोग । हे पुत्र! इन के साथ खूब कामभोग भोग करके, भुक्तभोगी होकर, श्रमण भगवान् महावीर के समीप गावत् दीक्षा ले लेना ।

यह सुनकर, मुत्ताहुकुमार माता पिता से बोला—हे माता पिता! जो आपने मुझे कहा है कि “समान त्वचा वाली इत्यादि विशेषणों सहित नियों को भोग तथा भुक्त भोगी होकर श्रमण भगवान् महावीर के समीप दीक्षा लेना” सो हे मातापिता! मनुष्यों के कामभोग के आधार शरीर आदि अपवित्र है । अशाश्वत है, इन से दमन उत्पन्न होता है, पित्त

वणाहि य पन्नवेमाणा एवं वयासी-एस णं जाया! णिगंथे पावयणे सचे अणुत्तरे केवलिए पडिपुत्ते णेयाउण ससुद्धे सल्लगतणे, सिद्धिमग्गे मुत्तिमग्गे निज्जाणमग्गे निब्बाण-मग्गे सव्वदुक्खप्पहीणमग्गे, अहीव एगंतदिट्ठीए, खुरो इव एगंतधाराए लोहमया इव जवा चावंधव्वा वान्तुयाकवले इव निरस्साए गंगा इव महानदी पडिसंयगमणाए महासमुद्धं इव भुयाहि दुत्तरे तिक्खं चंक्रमियव्वं गरुयं लंवेयव्वं असि-धोरव्व संचरियव्वं, णो खल्लु कप्पनि जाया! समणाणं णिगं-धाणं आहाकम्मिए वा उद्देसिए वा कीयगडे वा ठविए वा रइए वा दुब्बिक्खभत्ते वा कंनारभत्ते वा वहलियाभत्ते वा गिलाणभत्तं वा मूलभोयणे वा कंदभोयणे वा फलभोयणे वा धीयभोयणे वा हरियभोयणे वा भोत्तए वा, पायए वा, तुमं च णं जाया! सुहसमुच्चिए णो च्चेव णं दुहसमुच्चिए, णाल सीयं, णालं उण्हं, णाल खुहं, णालं पियाम णालं वानिय-पित्तियसिभियसन्निवाइयविविहे रोगायंके उच्चावण गामकंटण चावीसं परीसहोवसग्गे उदिन्ने सन्मं अहियासित्तए, भुंजाहि ताव जाया! माणुस्सए कामभोगे तत्रो पच्छा भुत्तभोगी समणास्स जाव पव्वहस्ससि ॥ ६० ॥

भावार्थ— इसके अनन्तर सुवाहुकुमार के माना पिता सुवाहुकुमार को जब, विषय (रूप रस आदि) के अनुकूल मानान्यवचनों से विशेष वचनों से, सम्बोधन वचनों से, विनीत वचनों से नामान्यरूप से, विशेषरूप से और सम्बोधन करके स्नेह भद्र वचनों से न ममका मके तब विषयों के प्रतिक्रम सगम से भय और उद्भ्रम पदा करनेवाले वचनों से इस तरह बोले—

वेदा! यह निर्दिष्ट प्रवचन मत्रा मत्र से पदान अद्वितीय या केवली

भगवान् से उपदिष्ट, मोक्ष दिलाने वाले गुण; स पविर्पूर्ण मोक्ष का स्वरूप बनाने वाला एकान्तप्राद रूपी कलक से रहित (अनेकान्तात्मक) तीन शक्तियों—माया, मिथ्यात्व, निदान—को नष्ट करने वाला, सिद्धि (हित की प्राप्ति) का मार्ग, मुक्ति (अहितकर्मों का नाश) का मार्ग, सिद्धिक्षेत्र का मार्ग, निर्वाण का मार्ग, आर्यसमन्त दुःखा के नाश करने का उपाय है। जिन तरह सोंप नाम का प्रहण करने के लिए उस की ताक में रहता है, इसी तरह इस निर्ग्रन्थ प्रवचन का पालन करने के लिए इस में ही एकाग्र बुद्धि रखनी पड़ती है। यह छुरे का तरह एक धार वाला है, क्योंकि इस में अपवाद रूप क्रियाओं का अभाव है (अर्थात् चारित्र्य पालने में किसी तरह की छूट नहीं है) इस का पालन करना लोह के जौ (चने) चबाना है। बालू के कौंग के समान (वैयक्तिक मुख रहित होने से) निःस्वादु है। गंगा महानदी के पूर का पार करना जैसे मुश्किल है, उसी तरह चारित्र्य पालन करना भी मुश्किल है। भुजाओं से जैसे समुद्र का पार करना कठिन है, ऐसे ही इस प्रवचन का पालन करना कठिन है। तीखी धार वाली तलवार पर आक्रमण करने की तरह कठिन है। जैसे पत्थर की भारी शिला का उठाना सहज नहीं है, उसी तरह चारित्र्य का पालन करना भी सहज नहीं है। तलवार की धार पर चलने की नाई इस प्रवचन का पालन करना भी कठिन काम है। क्योंकि हे पुत्र! निर्ग्रन्थ साधुओं को आत्मकर्मा आहार, औद्देशिक आहार, साधुओं के लिए सामग्री खरीद कर बनाया हुआ आहार, माधुओं के लिए ग्व छोड़ा हुआ आहार और साधुओं के लिए फिर नवीन तैयार किया हुआ आहार कल्पनीय—प्रहण करने योग्य—नहीं है। तम दुर्भिक्ष के समय निवारियों के लिए बनाया हुआ, जगल में सन्त्यानी आदि भिक्षुओं के लिए दानशाला आदि में तैयार किया हुआ आहार, पानी बगमने पर अनायो के लिए बनाया हुआ, पपने आरोग्य होने के लिए दिया हुआ आहार, मूल (जड़), कद

(मृग्य आदि) फट (आन आदि) वान, तज अन्य प्रकार का मचित भाजन-पान भा प्रतण कान योग्य नहीं है । और 'ह पुत्र' तंग मुग में लालन पालन हुआ है दृस देखा नहीं है, इसलिए न मठा, गमा, भव पशम गान पित कक सम्बन्धी दृ लमत्रि पान प्रगह विविध गंग आनक/अचानक प्राणा का घान जम वाले गंग) इन्द्रिया के प्रतिकृत चार्डम प्रकार का परिषदा क और उपसर्ग के प्राप्त होनेपर उन्हें मदन न कर सकेगा । इसलिए हे पुत्र' यावन मनुष्य सम्प्रन्धा काम भागा का भोगों । भोगन क बाद मुक्तभोगी होकर श्रमण भगवान् महावीर के नाना यावत् दीक्षा लेलेना ॥ ६० ॥

मूलम्— तने ण से सुवाहुकुमारं अम्मापिऊहि एवं वुत्ते ममाणे अम्मापियरं एवं वयासी—तहेव गं तं अम्मयाओ जणं तुभे ममं एवं वदह “एम गं जाया! निगंथे पावयणे सवे अणुत्तरे पुणरवि त चेव जाव तओ पच्छा भुत्तभोगी समणस्स भगवओ महावीरस्स जाव पव्वहस्ससि” एवं खलु अम्मयाओ! निगंथे पावयणे कीवाणं कापुरिसाणं इहलोगपडियट्ठाणं परलोगणिपिवासाणं दुरणुचरे, पाययजणस्स गो चेव गं धारस्स गिच्छियववसियस्म एत्थ किं दुक्करं करणयाए तं इच्छामि गं अम्मताओ! तुभेहि अब्भणुत्ताए समाणे समणस्स जाव पव्वहत्तण ॥ ६१ ॥

भावार्थ— माता पिता जत्र चारित्र की कठिन्ता बना चुके, तत्र सुवाहुकुमार माता पिता से बोला— ह माता पिता! आपने जो मुझसे इस प्रकार कहा है, कि “ह पुत्र' यह निर्ग्रन्थ प्रवचन मत्थ है, सब से प्रवान है । (यावत् जन्म से पूर्वोक्त मत्र विशेषण लगा लेना चाहिए) और इसके पश्चात् भुक्तभोगी होकर, श्रमण भगवान् महावीर के समीप (यावत्) दीक्षा ले लेना” सो ह माता पिता! यह निर्ग्रन्थ प्रवचन नपुंसक

कायर और क्लृप्तो (नीच पुरुषों) को, उस लोक सम्बन्धी बालमाओं से बंधे हुए लोगों को और परलोक के मुक्त की परता न करने वालों को कठिन है । किन्तु मैं जैसे धीरे निश्चिन्त ध्यवनाग वालों को—कर्म-वीरों को— इसका पालन करना क्या कठिन है? उसलिये हे माना पिता! आपकी आज्ञा लेकर प्रमथ भगवान् महावीर के समीप (यावत्) शीघ्रा लेना चाहता हूँ ॥ ३१ ॥

मूलम्— तते णं तं सुवाहुकुमारं अम्मापियरो जाहे
 वो संचाएति बहूहि विसयाणुलोमाहि य विसयपडिकूलाहि
 य आघवणाहि य पणवणाहि य सणवणाहि य विन्नवणा-
 हि य आघवित्तए वा पणवित्तए वा सणवित्तए वा विण्ण-
 वित्तए वा, ताहे अकामए चेव सुवाहुकुमारं एवं वयासी—
 इच्छामो ताव जाया! एगदिवसमवि ते रायसिरि पासित्तए ।

तते णं से सुवाहुकुमारं अम्मापियरमणुवत्तमाणे तुसि-
 गीण संचिट्ठति । तते णं से अदीणसत्त राया कोडुंवियपुरिसे
 सदावेइ, सदावेत्ता एवं वयासी—ग्विप्पामेव भो देवाणुप्पि-
 या! सुवाहुस्स कुमारस्स महत्थं महग्गं महरिहं विउलं
 रायाभिसेयं उवट्ठेह । तते णं ते कोडुंवियपुरिसा जाव ते
 वि तहेव उवट्ठेन्ति । तए णं से अदीणसत्त राया बहूहि
 गणाणायगदंडणायगेहि य जाव संपरिचुडे सुवाहुकुमारं
 अट्ठसएणं सोवणिणयाणं कलसाणं^१ एवं रूपमयाणं कलसाणं
 २ सुवण्णरूपमयाणं कलसाणं ३ मणिमयाणं कलसाणं ४ सुवण्ण-
 मणिमयाणं कलसाणं ५ रूपमणिमयाणं कलसाणं ६ सुवण्ण-
 रूपमणिमयाणं कलसाणं ७ भोमेज्जाणं कलसाणं ८ सब्बो-
 दएहिं सब्बमट्ठियाहि सब्बपुप्फेहि सब्बगंधेहि सब्बमल्लेहि
 सब्बोसहिहि य सिद्धत्थएहि य सब्बिड्डीए सब्बजुतीए

सव्यवलेणं जाव वृद्धभिनिर्घोसणादितरवेणं महया महया
 रागाभिमेणं अभिमिचिन्ति. अभिमिचित्ता करयल जाव
 कट्टु एवं वयामी—जय २ नंदा! जय २ भद्रा! जय नंदा!
 भद्रं ते, अजियं जिणाहि जिंयं च पालियाहि. जिंयमज्जे
 वसाहि, अजियं जिणाहि सत्तुपक्खं, जिंयं च पालेहि
 मित्तपक्खं, जाव भरहो इवमणुयाणं, हत्थिसीसस्स णगरस्स
 अत्तेसि च वड्डां गामागरनगरजावसन्निवेशाणं आह्वे-
 वचं जाव विहराहि त्तिकट्टु जय जय महं पडंजंति ॥ ३२ ॥

भावार्थ— इस के अनन्तर माता पिता जब मुवाहुकुमार को
 विषयों के अनुमूल और प्रतिमूल वृत्त में सामान्य उचनो विशेष वचनो
 सम्बोधन वचनो तथा विनय उचनो से न समझा सके, तब निगम
 होकर मुवाहुकुमार से कहने लगे—'त पुत्र' हम क्रम से कम एक दिन
 भी तुम्हें पहले राज्यलक्ष्मी भोगने दूण मिहामनानीन देयना चाहते हैं।
 जब मुवाहुकुमार माता पिता के कथन को मानकर चुप हो रहा तब राजा
 अदीनशत्रु ने सेवकों को बुलाया। उन्हें बुलाकर कहा—'भो देवानुप्रिय'
 महान् कार्यों में काम आने वाले बहुमूल्य तथा महान् पुरषों के योग्य
 (अथवा महान् पुरषों द्वारा पूज्य) राज्याभिषेक की नामश्री तैयार करो।
 सेवकों ने भी (यावत्) उनी प्रकार सब नामश्री तैयार की। तदनन्तर वृत्त
 से गणनायकों तथा दंडनायकों—अर्थात् राजकर्मचारियों— से (यावत्)
 घिरे हुए महागज अदीनशत्रु ने एक सौ आठ सोने के कण्ठ, एक सौ
 आठ चांदी के कलश एक सौ आठ सोने-चांदी के— दोनों को मिला
 कर बनाये हुए—एक सौ आठ मणियों के एक सौ आठ मणियों से जड़े
 हुए सोने के, एक सौ आठ मणियों से जड़े हुए चांदी के, एक सौ आठ
 मणियों से जड़े हुए सोने चांदी के और एक सौ आठ मिट्टी के कण्ठों में,
 भरे हुए सब तीथा के जल से सब तीर्थों की मिट्टी से, सब तीर्थों के

फूलों से, सब तीर्थों की सुगंधित चीजों से, सब तीर्थों की मालाओं से, सब औषधियों से, सरसों आदि से. समस्त आभूषण आदि ऋद्धियों से सब कान्ति युक्त पदार्थों से, समस्त सेना द्वाग (यावत्) दुन्दुभि आदि वाजों के घनघोर शब्द से महान महान् गज्याभिषेक किया । अभिषेक कर चुकने पर, सब लोगों ने हाथ जोड़कर (यावत्) इस प्रकार कहना शुरू किया— हे समृद्ध! तेरी जय हो! जय हो! हे कल्याणकर! तेरी जय हो! जय हो! हे आनन्द देनेवाले तेरा कल्याण हो! जय हो! नहीं जीते हुआँ पर विजय प्राप्त करो । जीते हुआँ का भलीभाति पालन करो । कुलाचार को पालने वाले कुटुम्बियों में निवास करो । नहीं जीते हुआँ को जीतो , जीते हुए शत्रुओं का मित्र के समान पालन करो । जैसेकि मनुष्यों का भरत चक्रवर्ती ने पालन किया था । हस्तिशीर्ष नगर का तथा इस के सिवाय और और गाव, आकर (यावत्) सन्निवेश का आधिपत्य करते हुए (यावत्) आनन्द से रहो । इतना कह कर फिर जय २ शब्द किया ॥ ६२ ॥

मूलम्— तते णं से सुवाहुकुमारे राया जाए, महया जाव विहरति, तए णं तस्स सुवाहुस्स रञ्चो अम्मपियरो एवं वयासी— भण जाया ! किं दलयामो कि पयच्छामो, किवा ते हियइच्छिण सामत्थे (मंते) ? तते णं से सुवाहू राया अम्मपियरो एवं वयासी— इच्छामि णं अम्मयाओ ! कुत्तियावणाओ रयहरणं पडिग्गहं च आणियं, कासवयं च सद्दावेडं । तते णं से अदीणसत्तू राया कोडुंविणपुरिसे सद्दावेइ । सद्दावेत्ता एवं वयासी— गच्छह णं तुब्भे देवाणुप्पिया! सिरिघराओ तित्ति सयसहस्साइं गहाय दोहि सयसहस्सेहि कुत्तियावणाओ रयहरणं पडिग्गहं च उवणेह, सयसहस्सेणं कासवयं सद्दावेह । तए णं ते- कोडुंविणपुरिसा

अदीणसत्तुणा रणणा एवं वुत्ता समाणा हट्टतुट्टा सिरिघराओ
 तिन्नि सयसहस्माडं गहाय, कुत्तियावणाओ दोहिं मयसहस्सेहि
 रयहरणं पडिगहं च उवणंति । मयसहस्सेणं कासवयं महा-
 वेंति । तते णं से कासवण तेहि कोटुंविघपुरिसेहिं सहाविण
 समाणे हट्टे जाव हियण पहाण कयवलिकम्मे कयकोउयमंगल-
 पायच्छित्ते सुद्धप्पावेसाडं वत्याडं मंगलाडं पवरपरिहिण
 अप्पमहग्घाभरणाळंक्रियसरीरे जेणेव अदीणसत्तु राया तेणेव
 उवागच्छह, उवागच्छित्ता अदीणसत्तु रायं करयलमंजलि
 कट्टु एवंवयासी—संदिसह णं देवाणुप्पिया! जं मण करणिज्जं?
 तते णं से अदीणसत्तु राया कासवयं एवंवयासी—गच्छा-
 हि णं तुमं देवाणुप्पिया ! सुरभिणा गंधोदणं णिकके हत्थ-
 पाण पक्खालेह । सेयाण चउप्फालाण पोत्तीण मुहं वंधित्ता
 सुवाहुस्स कुमारस्स चउरंगुलवज्जे णिककमणपाउग्गे अग्ग-
 केसे कप्पेहि । तते णं से कासवण अदीणसत्तुणा रणणा
 एवं वुत्ते समाणे हट्टे जाव हियण जाव पडिसुणेह, पडिसुणेत्ता
 सुरभिणा गंधोदणं हत्थपाण पक्खालेह । पक्खालेत्ता सुद्ध-
 वत्येणं मुहं वंधह । वंधित्ता परेणं जत्तेणं सुवाहुस्स कुमारस्स
 चउरंगुलवज्जे निक्खमणपाउग्गे अग्गकेसे कप्पेह । तते णं
 तस्स सुवाहुस्स कुमारस्स माया महरिहेणं हंसलक्खणेणं
 पडसाडणं अग्गकेसे पडिच्छट्ट । पडिच्छित्ता सुरभिणा
 गंधोदणं पक्खालेह, पक्खालित्ता सरसेणं गोसीसचंदणेणं
 चचाओ दलयनि, ढलहत्ता सेयाण पोत्तीए वंधेति । वंधित्ता
 रयणसमुग्गयंसि पक्खिवनि, पक्खिवित्ता मंजूसाए पक्खि-
 वह, पक्खिवित्ता हारवारिधारसिंदुवारच्छिन्नमुत्तावलिप्पगा-
 साहं अंसुहं विणिम्मुयमाणी विणिम्मुयमाणी रोयमाणी

यमाणी कंदमार्गी कंदमार्गी विलवमार्गी विलवमार्गी एवं
दासी— एस णं अमहं सुबाहुस्स कुमारस्स अब्भुदएसु य
स्सवेसु य पसवेसु य तिहीसु य छणेसु य जत्तेसु य पव्व-
ोसु य अपच्छिद्धमे दरिसणे भविस्सइत्ति कट्टु जसीसाम्-
वेत्ति ॥ ६३ ॥

भावार्थ—तदनन्तर, जब मुवाहुकुमार राजा होकर (यावत्)
हाहिमवन पर्वत की नाई श्रेष्ठ होकर विहार करन लगा, तब राजा
मुवाहुकुमार के माता पिता वाले—'पुत्र' कहो, तुम्हे क्या देवे? तुम्ह
या इष्ट है जो दिया जाय' तुम हृदय मे क्या चाहते हो? राजा मुवाहु-
कुमार माता पिता से बोले—'हे माता पिता! मैं कुत्रिक दूकान (देवता से
अधिष्ठित होने के कारण जहा तीन लोक की सब चीजें मिल सके उस
कुत्रिक दूकान कहत है) से रजोहरण और पात्र मगवाना चाहता हू और
नाई को बुलवाना चाहता हू । तदनन्तर राजा अदीनशत्रु ने नौकरों को
बुलाया और बोले—'ह देवानुप्रिय! तुम जाओ और तीन लाख सिक्के
ले जाओ म त जाकर कुत्रिक दूकान से दो लाख का रजोहरण और पात्र ले
जाओ तथा एक लाख देकर नाई को बुला लाना । सबक लोगो न राजा
अदीनशत्रु की आज्ञा मुनकर हर्षित और सन्तुष्ट होकर, खजाने में तीन
लाख सिक्के लेकर, कुत्रिक दूकान पर जाकर, दो लाख सिक्को से रजो-
हरण और पात्र लिया तथा एक लाख सिक्के देकर नाई को बुलाया ।
वहको द्वाग बुलाए हुए नाई ने भी हर्षित और सन्तुष्ट हृदय होकर स्नान
कराया, कुलदेवता की पूजा का, कातुक और मागलिक प्रायश्चित्त (तिलक
दि) किये । राजसभा में प्रवचन करन योग्य शुद्ध मागलिक श्रेष्ठ वचन
कहे, थोटे किन्तु बहुमूल्य आभरणों से शरीर को भूषित किया और
जा अदीनशत्रु की ओर गया । वहा जाकर, हाथ जोड कर राजा अदीन-
शत्रु'से इस प्रकार बोला—'ह देवानुप्रिय! आज्ञा दीजिये, जो मुझे करना

है ? राजा अदीनशत्रु ने नाई से कहा—हे देवानुप्रिय! तुम जाओ और निर्मल मुगधित गंधोदक से हाथ पैर साफ वोंकर चार पड (पट्टी) वाले वख से मुँह बाध कर सुवाहुकुमार के दोक्षा-के लायक चार अंगुल छोडकर केशों के अग्रभाग काटो । राजा अदीनशत्रु की आज्ञा मुनकर नाई ने हर्षित (यावत्) हृदय होकर आशा स्वीकार की स्वीकार करके सुगव गंधोदक से हाथ पैर धोए । वोंकर शुद्ध वख से मुँह बाधा । मुँह बाधकर बडे ही यत्न से चार अंगुल छोडकर दीक्षा के योग्य, सुवाहुकुमार क केशों के अग्रभाग काटे । सुवाहुकुमार की माता ने बडे आदमियों के योग्य, हम जैसे सफेद या हंस के चिन्ह से शोभमान वख में उन कटे हुए केशों को रख लिए और मुगध गंधोदक से उन्हें धोया । वोंकर बावन चन्दन के छटि दिये, और उसी सफेद वख में बाधकर रत्नों के डिब्बे में रख लिए । उस डिब्बे को सद्क में धर कर मोतियों की माला जल की धारा या निर्गुण्डी के फूल सरीखे सफेद आम्र टारती हुई रोता २ आरुदन और विलाप करती हुई इस् प्रकार बोली—हमें अभ्युदय के समय, उत्सव में पुत्रादि के जन्मोत्सव में तिथियों में इन्द्रादि के उत्सव के समय, पवा में यही दर्शन सुवाहुकुमार का अन्तिम दर्शन होगा, ऐसा सोचकर उनमें वह बालों की पेट्टी सिराने रख छोडी ॥ ६३ ॥

मूलम्— तते ण तस्स सुवाहुस्स कुमारस्स अम्मापि-
 यरो उत्तरावक्कमयं सीहासणं रघावेत्ति, रघावेत्ता सुवाहु-
 कुमारं दोच्चं पि तच्चं पि सेयपीयएहि कलसेहि ण्हावेत्ति, ण्हावे-
 त्ता पम्हलसुउमालाए गंधकासाइयाए गायाइं लूहेत्ति, लूहि-
 त्ता सरसेणं गोसीसचंदणेणं गायाइं अणुलिपंति । अणुलि-
 पित्ता नासानीसासवायवोज्झं जावहंसलक्खणं पडगसाडगं
 नियंसंति । नियंसित्ता हारं पिणद्धंति, पिणद्धित्ता अद्धहारं
 पिणद्धंति, पिणद्धित्ता एवं एगावलि मुत्तावलि कणगावलि

रघणावलि पालंवं पायपलंवं कडगाइं तुडिगाइं केऊराइं अंग-
 याइं दस मुद्दियाणंतयं कडिसुत्तयं कुंडलाइं चडामणि रघणु-
 ककडं मउडं पिणद्धंति, पिणद्धित्ता दिव्वं सुमणादामं पिणद्धं-
 ति, पिणद्धित्ता द्रहरमलयसुगंधिए गंधे पिणद्धंति। तते णं
 तं सुवाहुकुमारं गंधिमवेद्धिमपूरिमसघाहमेणं चउच्चिहेणं
 मल्लेणं कप्परुक्खगं पि व अलंकियविभूसियं करंति । तते
 ण से अदीणसत्तू राया कोडुंविघपुरिसे सहावेइ , सहावेत्ता
 एवं वयासी - खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! अणेगखंभस-
 यसन्निविट्ठं लीलट्टियसालभंजियागं ईहामिय- उसभतुरगन-
 रमगरविहगवालगकिन्नररुसरभचमरकुंजरवणलयपउमल-
 यभत्तिचित्तं घंटावलिमहुरमणहरसरं सुभकंतदरिसणिज्जं
 णिउणोवचियमिसिमिसंतमणिरयणघंटियाजालपरिक्खत्तं
 अब्भुगगयवहरवेइयापरिगयाभिरामं विज्जाहरजमलजंतजुत्तं
 पि व अच्छीसहस्समालणीयं रूवगसहस्सकलियं भिसमाणं
 भिविभसमाणं चक्खुल्लोयणलेस्स सुहफासं सस्सिरीयरूव
 सिग्घं तुरियं चवलं वेइयं पुरिससहस्सवाहिणीं सीयं उवट्टवे-
 ह । तते णं ते कोडुंविघपुरिसा हट्टतुट्ट जाव उवट्टावेति । तते
 णं से सुवाहू कुमारे सीयं दुरूहइ, दुरूहित्ता सीहासणवरगते
 पुरत्थाभिमुहे सन्निसन्ने ॥ ६४ ॥

भावार्थ—तदनन्तर, सुवाहुकुमार के माता पिता ने उत्तर दिशा
 में एक सिंहासन रखवाया । ग्खवाकर सुवाहुकुमार को उस पर बैठा कर
 दो तीन वाग सफद और पीले (चादी मोने के) कलशों से स्नान कराया ।
 स्नान कर चुकने पर रुँदाग मुकामल सुगंधित गीन वस्त्र से शरीर
 पोछा । शरीर पोछकर सरस बावन चन्दन का लेप किया । लेप करके

नाक के निरुवाग की हवा से उठने वाला—वटुन पतला—(धाकत)
 हम जैसा स्वच्छ वस्त्र पहनाया । पहनाकर, हार (अठारह लठों का)
 और अर्ध हार पहनाया, तथा एकावलि मुक्ताजलि कनकाजलि रत्नाजलि
 हार पहनाए । पैरों तक लटकने वाला लम्बा हार, रुडे मुद्रिका(बाहु-गदिका)
 भुजवत् दणों अगुलियो मे दण मुद्रिकाएँ, कंधना कुटल चूडामणि
 (मस्तक में लगाने का रत्न) और रत्न से जडा टुआ मुकुट पहनाया ।
 पहनाकर दिव्य फलमाला पहनाई । पहनाकर मलयपर्वत पर पैदा
 होने वाले चन्दन का अन्त लगाया, नदनन्तर मुवाटकुमार को मृत आदि
 मे गर्थी हुई फूलों की गेंद मणीवी गथ कर लपेटा हुई, धूमि और फूलों
 के परम्पर मयोग से बनाई हुई उन चार नगद का मालामो में कल्पवृक्ष
 की तरह प्रलङ्घन और विभूषित किया । पश्चात् राजा अर्धनशत्रुने नीरुगे
 को बुलाकर कहा—भो देवानुप्रिय! मेरुडो ग्धों वाली लीना कर्ती
 हुई अनेक पुनलियो में युक्त भेटिया धैल घोडा नर भग्न पक्षी सर्प
 किन्तु नर (मृग विशेष) अष्टास्र चमरी गाय हाथा वनलना और पद्म
 लता के चिन्हों में शामिलान हंटी २ घंटियों के मनोहर शब्दों में
 शब्दावधान, शुभ सुन्दर और दर्शनीय, चतुर कागगणों द्वारा बनाई हुई,
 देदीप्यमान माण्ड और रत्नों की बनी हुई घंटियों के समुदाय में व्याप्त
 वज्र का बनी हुई ऊँची वेदी में युक्त, मनोहर विद्याधरा की चलती
 फिरती पुतलियों के जोड़े से युक्त (चित्रित) हजार किरणों वाली
 और प्रवीर्यत हजार रूपों में युक्त चमकती हुई—वृष चमकती हुई,
 अतिशय दर्शनाय मुखद स्पर्श वाली सश्रीक रूप वाली शीत्र—मनि
 शीत्र चलन वाली, चमल, वेग वाली एक हजार पुरुषों में उठाई जान
 वाली पालकी ले आओ । यह मुनकर सेवर लोग दर्पित और मन्तुष्ट
 होकर (शयन्) पालकी ले आये । मुवाटकुमार उम पर चढ़ कर पूर्व
 दिशा की ओर मुँह करके वेदी पर बठ गया ॥ ६४ ॥

मूलम्— तते णं तस्स सुवाहुस्स कुमारस्स माया पहाया
 कयवलिकम्मा जाव अप्पमहग्घाभरणांलंकियसरीरा सीयं
 दुरूहइ, दुरूहत्ता सुवाहुस्स कुमारस्स दाहिणे पासे भद्दा-
 सणंसि निमीयइ । तते णं तस्स सुवाहुस्स कुमारस्स अंब-
 धाई रयहरणं पडिग्गहगं च गहाय सीयंदुरूहइ, दुरूहत्ता
 सुवाहुस्स कुमारस्स वामे पासे भद्दासणंसि निसीयति ।
 तते णं तस्स सुवाहुस्स कुमारस्स पिट्ठओ एगा वरतरुणी
 सिंगारागारचारुवेसा संगयगयहसियभणियचिट्ठियविलास-
 संलावुल्लावनिउणजुत्तोवयारकुसला आमेलगजमलजुयलव-
 ट्ठियअब्भुन्नयपीणरतियसंठियपयोहरा हिमरययकुंदेंदुपणासं
 सकोरेंद मल्लदामधवलं आयवत्तं गहाय सलीलं ओहारेमाणी
 ओहारेमाणी चिट्ठइ । तते णं तस्स सुवाहुस्स कुमारस्स दुबे
 वरतरुणीओ सिंगारागारचारुवेसाओ जाव कुसलाओ सीयं
 दुरूहंति, दुरूहत्ता सुवाहुस्स कुमारस्स उभओ पासं नाना-
 मणिकणगरयणमहरिहतवणिज्जलविचित्तदंडाओ चिल्लिया-
 ओ सुहुमवरदीहवालाओ संखकुंददगरयअमयमहियफेणपुं-
 जसन्निगासाओ चामराओ गहाय सलीलं ओहारेमाणीओ
 ओहारेमाणीओ चिट्ठन्ति । तते णं तस्स सुवाहुस्स कुमारस्स
 एगा वरतरुणी सिंगारा जाव कुसला सीयं जाव दुरूहति,
 दुरूहत्ता सुवाहुस्स कुमारस्स पुरओ पुरत्थिमेणं चंदप्पभव-
 हरवेरुलियविमलदंडं तालियंठं गहाय चिट्ठति । तते णं तस्स
 सुवाहुस्स कुमारस्स एगा वरतरुणी जाव सुरूवा सीयं दुरू-
 हति । दुरूहत्ता सुवाहुस्स कुमारस्स पुव्वदक्खिणेणं सेयं
 रययामयं विमलसलिलपुन्नं मत्तगयमहासुहाकितिसमाणं
 भिगारं गहाय चिट्ठइ, तते णं तस्स सुवाहुस्स कुमारस्स पिघा

कोटुंवियपुरिमे सदावेति, सदावेत्तो एवं वदामी-- त्रिष्पा-
मेव भां देवाणुप्पिया! सरिसयाणं सरित्तयाणं सरिच्चयाणं
एगाभरणगहियनिज्जायाणं कोटुंवियवरनरुणाणं महस्सं
सदावेह । जाव सदावेति, तते गां ते कोटुंवियवरनरुणपुरि-
सा अदीणसत्तुस्स रन्ना कोटुंवियपुरिमेहिं सदाविया समाणा
हटा प्हाया जाव एगाभरणगहियनिज्जाया जेणामेव अदी-
णसत्त राया तेणामेव उवागच्छति, उवागच्छिता अदीण-
सत्तु रायं एवं वदामी— संदिसह णं देवाणुप्पिया ! जत्तं
अस्सेहिं करणिजं । तते णं मे अदीणंसत्तु राया नं कोटुंविय-
वरनरुणमहस्सं एवं वयामी— गच्छह गां देवाणुप्पिया! सुवा-
हस्स कुमारस्स पुरिससहस्सवाहिणि सीयं परिवहेह । तते
गां तं कोटुंवियवरनरुणमहस्सं अदीणसत्तुणा रणा एवं वुत्तं
संनं हटुत्तुं सुवाहस्स कुमारस्स पुरिससहस्सवाहिणि सीयं
परिवहह । तए णं सुवाहस्स कुमारस्स पुरिससहस्सवाहिणि
सीयं वुरूहस्स समाणस्स इमे अट्टमंगलयात्तप्पहमयाए पुर-
ओ अट्टाणुपुव्वीए संपत्तियया । तं जहा— सोत्थिय १ सिरी-
वच्छ २ णंदियावत्त ३ वट्टमाणग ४ भदासन ५ कलस ६
मच्छ ७ दप्पण ८, जाव वह्वे अत्थत्थिया जाव ताहिं हटा-
हिं जाव अनवरयं अभिगंदंता य अभिधुगंता य एवं वया-
मी— जय जय नंटा ! जय जय भदा ! जय नदा ! भहं
ते, अजियाटं जिणाहिं टंदियाटं, जियं च पालेहिं समणधम्मं,
जियविग्घो वि य वसाहिं नं देव ! सिद्धिमज्जे, णिहणाहि
रागदोसमहे, तवेणं धित्तिधणियवट्टकच्छे महाहि य अट्टक-
म्मसत्तू भाणेगां उत्तमेणं सुक्केणं, अप्पमत्ते पावय, विति-
मिरमणुत्तरं केवलं नाणं, गच्छघ परमपयं सासयं च अयलं

हंता परीसहचमुं णं, अभीओ परीसहोवसग्गाणं धम्मे ते
अविग्घं भवउत्ति कट्टु पुणो पुणो मंगलजयजयसहं पउं—
जंति। तते णं से सुयाहुकुमारं हत्थिसीसस्स नगरस्स मज्झं-
मज्झेणं निग्गच्छइ । निग्गच्छित्ता जेणेव पुप्फकरंडे उज्जाणे
तेणेव उवागच्छइ, उवागच्छित्ता पुरिससहस्सवाहिणीओ
सीयाओ पचोरुहइ । तते णं तस्स सुयाहुस्स कुमारस्स
अम्मापियरो सुबाहुं कुमारं पुरओ कट्टु जेणामेव समणे
भगवं महावीरे तेणामेव उवागच्छइ । उवागच्छित्ता समणं
भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं पयाहिणं करेति, करेत्ता
वंदंति नमंसंति, वंदित्ता णमंसित्ता एवं वयासी—॥ ६५ ॥

भावार्थ— तदनन्तर, सुबाहुकुमार की माता स्नान करके गृहदेवता की पूजा करके (यावत्) थोड़े किन्तु बहुमूल्य वाले अलंकारों से शरीर को अलंकृत करके पालकी पर सवार हुई। सवार होकर सुबाहुकुमार की दाहिनी ओर, भद्रासन पर बैठ गई। इसके बाद सुबाहुकुमार को दूध पिलाने वाली धाय रजोहरण और पात्र लेकर पालकी पर चढ़ी और सुबाहुकुमार की बाईं ओर भद्रासन पर बैठी। पश्चात् एक उत्तम तरुणी (जवान स्त्री) सुबाहुकुमार के पीछे बैठी। वह ऐसी जान पड़ती, मानो सिगार का आगार ही हो। उसका वेष सुन्दर था। वह चलने में, हँसने में, बोलने में, चेष्टा करने में, विलास (नेत्र के विकार) में, मंलाप और उल्लाप में निपुण, तथा लोकव्यवहार में चतुर थी। उसके कुछ २ आपस में मिले हुए, समश्रेणी में रहे हुए दोनों स्तन गोल ऊँचे मोटे सुख देने वाले और विशेष (सुन्दर) आकार वाले थे। वह युवती बर्फ चादी कुद के पुष्प या चन्द्रमा के समान कान्ति वाले कोरंट वृक्ष के फूलों के गुच्छों की मालायों से युक्त, सफेद छत्र को लेकर, उसे लीला पूर्वक धारण किये हुए थी। इसके अनन्तर सिगार के भंडार के समान सुन्दर वेष वाली दो तरुण स्त्रियों

पालकी पर चढ़कर मुवाट्टुमार की दोनों ओर आकर, नाना मणि मुवर्ग
 रत्न और उद्भूत लाल मोत से युक्त उन्वल उठी गाले, तथा अचम्भा
 पैदा करने वाले, चमकदार, पतले उत्तम और लम्बे वालों वाले, शंख
 कुद के प्रल पानी की छंटी मी बुद (ऊँच) मयें दृष्ट अप्रत के पान के
 पुत्र की तरह मपेट वेवगे सो लेकर, लीला पूर्वक योगी दृष्ट दृष्टों ।
 पश्चान् निगाह क आगाह की नाई -- गार निगाह किये दृष्ट -- यावत
 कुशल एक उत्तम लक्ष्मी (यावत) मुवाट्टुमार के समीप पाटकी
 पर तवार दृष्ट । तवार होकर मुवाट्टुमार के माने, पूर्व दिशा में खड़ी
 होकर, चन्द्रकान्त मणि और वैद्यी मणि से जड़े दृष्ट उटवाने तीनने को
 लेकर उठी । फिर निगाह किये दृष्ट एक प्रौ मन् रत्नगम्यो मुवाट्टुमार
 के समीप पाटकी पर उठकर, मुवाट्टुमार में पूर्व दिशि -- आग्नेय --
 दिशा में खड़ी होकर, निर्भय जल से नंग दृष्ट, मदीनवन द्वारी के गेटे मुह
 के जैसे अन्तर्गत वाले चारी के भगार (भारी) को लेकर उठी । इसके बाद
 मुवाट्टुमार के पिता राजा अदीनशत्रु ने सेवकों का बुधा कर कहा --
 'मो देवानुप्रिय' समान, समान रग के, समान उभ्र के, समान पोशाक
 (या आभरण) वाले एक हजार जवान सेवकों को शीघ्र बुला लाओ ।
 (यावत) सेवकों ने उन्हें बुलाया । तब वे अच्छे एक हजार जवान पुरुष
 राजा अदीनशत्रु के आठमियों के बुलाने पर हर्षित होकर, स्नान करके
 (यावत) एक ही नगीचे आभरणों को धारण करके, जिन ओर महाराज
 अदीनशत्रु थे, उमी ओर आये । आकर महाराज अदीनशत्रु से बोले --
 'हे देवानुप्रिय' आज तो जिये, हमें क्या करना है? राजा अदीनशत्रु ने उन
 एक हजार तन्मय सेवकों से कहा -- 'देवानुप्रिय' जाओ, पुण्यमहन्त्रवाहिनी
 (एक हजार आठमियों में चलाई जाने वाली) मुवाट्टुमार की पालकी को
 उठाओ । उन एक हजार आठमियों ने अदीनशत्रु राजा की आज्ञा सुनकर
 हर्षित और सन्तुष्ट होकर, मुवाट्टुमार की पुण्यमहन्त्रवाहिनी पालकी उठाई ।

पालकी उठाने के बाद, पुरुषसहस्रवाहिनी पालकी पर आरूढ हुए मुनाहुकु-
मार के आगे आगे क्रम से ये आठ मागलिक द्रव्य चले— १ स्वस्तिक
(साधिया) २ श्रीवत्स ३ नदावर्त ४ वर्द्धमान ५ मिहामन ६ पूर्ण कलश
७ मत्स्य युगल और ८ दण्ड । (यावत्) बहुत से याचक (यावत्) इष्ट
वचनों से (यावत्) आम्बर अभिनदन और स्तुति करते हुए इस प्रकार
बोले— “ ह समृद्ध! तुम्हारी जय हो! जय हो! हे भद्र! तुम्हारी जय हो!
जय हो! ह आनन्द देने वाले! तंग कल्याण हो! जय हो! नहीं जीती हुई
इन्द्रियों को जातो । पित्रो को पाग काके परम्परा से चले आये हुए श्रम-
णवर्म का पालन करो । हे देव! सिद्धि को प्राप्त करो । तप के द्वारा राग
द्वेष रूपा मल्लों का निग्रह करो । अत्यन्त वीरता क साथ, कमर कस
कर आठ कर्म रूपी शत्रुमा का गर्दन करो । उत्तम शुक्लध्यान से अप्रमत्त
हो कर देदीप्यमान और सर्वो-कृष्ट केवलजन प्राप्त करके, परम पद नित्य
और अचल मोक्ष म जाओ । परिपक्व रूपी सेना को जीतकर, परिषह और
उपसर्गों में निर्भय होओ ! तुम्हारा मानु धर्म निर्मित होवे” । इस प्रकार
आम्बर मागलिक जय जयकार करने लगे । पश्चात् मुनाहुकुमार हस्तिशार्ध
नगर के नौचौनाच होकर निकला । निकटकर जिस ओर पुष्पकगडक
उथान था, उसी ओर आया । आम्बर पुरुषसहस्रवाहिनी पालकी से उतरा ।
उतर्गने के बाद, मुनाहुकुमार के मता पिता, मुनाहुकुमार को आगे काके,
श्रमण भगवान् महावीर की ओर आये । आकर श्रमण भगवान् महावीर को
तीन बार प्रदक्षिणा करके वन्दना और नमस्कार किया । वन्दना
नमस्कार काके बोले— - ॥ ६५ ॥

मूलम्— एस णं देवाणुपिया! सुवाहुकुमारं अहं एगे
पुत्तं हृष्टं कंते पिए मणुत्ते मणामे वीसाग्गिण जीवियऊसासए
हिययणंदिजणए उंयरपुष्पं पि व इल्लहे सवणयाए, किमंग
पुण पासणयाए, से जहानामए उप्पलेत्ति वा वउमेत्ति वा

कुमुदेति वा पंके जाए, जले संवड्डिए नोवलिप्पइ पंकरएणं,
 नोवलिप्पइ जलरएणं एवामेव सुबाहुकुमारे कामेसु जाए,
 भोगेसु संवड्डिए, णोवलिप्पइ कामरएणं णोवलिप्पइ भोग-
 रएणं, एस णं देवाणुप्पिया! संसारभउव्विग्गे, भीए जम्मण-
 जरामरणाणं, इच्छइ देवाणुप्पियाणं अंतिए मुंडे भवित्ता
 आगाराओ अणागारियं पव्वइत्तए । अम्हेणं देवाणुप्पियाणं
 सिस्सभिक्वं दलयामो । पडिच्छंतु णं तुम्हे देवाणुप्पिया!
 सिस्सभिक्वं । तते णं समणे भगवं महावीरे सुबाहुस्स
 कुमारस्स अम्मापिज्जहिं एवं वुत्ते समाणे एयमट्ठं सम्मं
 पडिसुणेह । तते णं से सुबाहुकुमारे समणस्स भगवओ
 महावीरस्स अंतियाओ उत्तरपुरत्थिमं दिसीभागं अबक्क-
 मति, अबक्कमित्ता सयमेव आभरणमल्लालंकारं उम्मुयइ ।
 तते णं से सुबाहुकुमारस्स माया हंसलक्खणेणं पडगसाड-
 एणं आभरणमल्लालंकारं पडिच्छइ, पडिच्छित्ता हारवारिधार-
 सिंदुवारच्छिन्नमुत्तावलिप्पगासाइं अंसुणि विणिम्मुयमाणी
 विणिम्मुयमाणी, रोयमाणी रोयमाणी, कंदमाणी कंदमाणी,
 विलवमाणी विलवमाणी, एवं वयासी— जतियव्वं जाया!
 घडियव्वं जाया! परिक्कामियव्वं जाया! अरिंस च णं अट्ठे
 नो पमाएयव्वं । अम्हं पि णं एवमेव मग्गे भवउ त्ति कट्टु.
 सुबाहुस्स कुमारस्स अम्मापियरो समणं भगवं महावीरं वंदंति
 नमंसंति, वंदित्ता नमंसित्ता जामेव दिसिं पाउव्वभूया तामेव दिसिं
 पडिगया । तते णं से सुबाहुकुमारे पंचमुट्ठियं लोयं करेइ,
 करेत्ता जेणामेव समणे भगवं महावीरे तेणामेव उवागच्छइ,
 उवागच्छित्ता समणं भगवं महावीरं तिक्खुत्तो आयाहिणं
 पयाहिणं करेइ, करेत्ता थंदइ नमंसइ, वंदित्ता नमंसित्ता एवं
 वयासी— ॥ ६६ ॥

भावार्थ— हे देवानुप्रिय! यह सुबाहुकुमार हमारा इकलौता पुत्र है। यह इष्ट कान्त प्रिय मनोज्ञ मनोरम विश्वासपात्र जीवन का श्वास तथा हृदय को आनन्द देने वाला है। ऊमर के फूल की नाई देखना तो दूर रहा, इसका नाम सुनना भी दुर्लभ है। नीला उत्पल कमल (सूर्य विकाशी) कुमुद (चन्द्र विकाशी) कीचड़ में उत्पन्न होकर और जल में बढ़ कर भी जैसे उनमें लिप्त नहीं होते, उसी प्रकार सुबाहुकुमार ने कामों में ही जन्म लिया है, भोगोपभोगों में यह बड़ा हुआ है (इसका लालन पालन हुआ है) किन्तु यह काम और भोगोपभोगों में लिप्त नहीं हुआ है। हे देवानुप्रिय! यह ससार से उद्विग्न और जन्म जरा मरण से डरा हुआ है। इसलिए आपके पास मुण्डित होकर गृहस्थावस्था त्यागकर मुनि-दीक्षा लेना चाहता है, और हम आपको शिष्य की भिक्षा देते हैं। हे देवानुप्रिय! आप शिष्य-भिक्षा को स्वीकार कीजिये। सुबाहुकुमार के माता पिता के इस कथन को श्रमण भगवान् महावीर ने अच्छी तरह सुना। सुबाहुकुमार श्रमण भगवान् महावीर के समीप ईशान कोण में आया। वहाँ आकर अपने आप आभरण फूलमाला और अलकारो को उतार दिया, और सुबाहुकुमार की माता ने हस्त के ऐसे स्वच्छ वस्त्र में उन्हे ले लिया। तथा हार जल की धारा सिद्धुवार (निर्गुंडी) के फूलों या हाग से टूटे हुए मोतियों की तरह आसू टारती २ रोती २ क्रदन करती २ विलाप करती २ बोली—हे पुत्र! सयम में यत्न करना। हे पुत्र! अप्राप्त वस्तु (गुण) को प्राप्त करना। हे पुत्र! सयम में पराक्रम करना और इस विषय में प्रमादन करना। हमारा भी यही मार्ग होवे। इस प्रकार कह कर सुबाहुकुमार के माता पिता श्रमण भगवान् महावीर को वन्दना नमस्कार करके, जिस ओर से आये थे, उसी ओर वापस लौट गये। उनके लौट जाने पर, सुबाहुकुमार ने अपने हाथों से पचमुष्टि लोच करके, जिधर श्रमण भगवान् महावीर थे, उसी तरफ जाकर श्रमण भगवान् महावीर के चरणों में प्रदक्षिणा करके वन्दना

और नमस्कार किया । वन्दना नमस्कार करके बोला—॥ ६६ ॥

मूलम्— आलित्तं णं भंते! लोए, पलित्ते णं भंते!
लोए, आलित्तपलित्ते णं भंते! लोए जराए मरणेण य, से
जहा नामए केई गाहावती आगारंसि भियायमाणंसि जे
तत्थ भंडे भवति अप्पभारे मोल्लुगुरुए तं गहाय आयाए
एगंतं अवक्कमइ, एस मे णित्थारिए समाणे पच्छा पुरा
हियाए सुहाए खेमाए निस्सेसाए अणुगामियत्ताए भविस्सइ,
एवामेव ममवि एगे आया भंडे इट्ठे कंते पिण मणुत्ते मणामे
एस मे निच्छारिए समाणे संसारवोच्छेयकरे भविस्सइ, तं
इच्छामि णं देवाणुप्पिएहिं सयमेव पव्वावियं, सयमेव मुंडा-
वियं सेहावियं मिक्खावियं मयमेव आघारगोघरविणयत्तेण-
इयचरणकरणजायामायावत्तियं धम्ममाइक्खियं । तते णं
समणे भगवं महावीरं सुवाहुकुमारं सयमेव पव्वावेइ, सय-
मेव मुंडावेइ, सयमेव आघार जाव धम्ममाइक्खइ । एवं
देवाणुप्पिया।गंतव्वं चिट्ठियव्वं निसीयव्वं तुयट्ठियव्वं भुंजियव्वं
भासियव्वं एवं उट्ठाए उट्ठाय पाणेहिं भूतेहिं जीवेहिं
सत्तेहिं संजमेणं संजमियव्वं, अरिंस चणं अट्ठे णो पमादेयव्वं ।
तते णं से सुवाहुकुमारं समणस्म भगवओ महावीरस्स
अंतिए इमं एयारूव्वं धम्मियं उवएसं निसम्म सम्मं पडिबज्जइ ।
तमाणाए तह गच्छइ तह चिट्ठइ जाव उट्ठाए उट्ठाय पाणेहिं
भूएहिं जीवेहिं सत्तेहिं संजमेइ ॥ ६७ ॥

— ० - ० - ० - ० - ० - ० -

भावार्थ— हे भगवन्! यह समाग जग और मरण रूपी अग्नि से
जल रहा है, सब जल रहा है और हे भगवन्! चार्ग ओग से अत्यन्त जल

रहा है। जैसे कोई सेठ, घर में आग लगने पर, घर में रक्खे हुए थोड़े बोझे वाली किन्तु बहुमूल्य चीजों को लेकर स्वयं एकान्त में जाकर सोचता है— कि मेरे द्वारा निकाली हुई ये चीजे इस लोक में, आगामी काल में हित के लिए, सुख के लिए ज्ञेय के लिए निश्चयसः (कल्याण) के लिए होंगी, इसी प्रकार मेरा आत्मा भी एक भांड (उपकरण) है, यही इष्टकान्त प्रिय मनोज्ञ और मनोरम है। मैं आत्मा को जलते हुए संसार से निकालूंगा, तो यह संसार (कर्म सहित अवस्था) का नाश करने वाला होगा। इसलिए मैं आप से स्वयं दीक्षा लेना, स्वयं मुगिडत होना, स्वयं प्रतिलेखना आदि क्रियाओं को ग्रहण करना, स्वयं सूत्र अर्थ सीखना, तथा आचार गोचरी विनय विनय का फल कर्म क्षय आदि, चारित्र्य, करण (आहार आदि की शुद्धि आदि) समय की यात्रा, मात्रा (आहार आदि का परिमाण) धर्म-कथा आदि वृत्ति वाले धर्म को धारण करना चाहता हूँ।

इसके अनन्तर श्रमण भगवान् महावीर ने सुबाहुकुमार को स्वयं ही दीक्षा दी, स्वयंमेव मुगिडत किया, स्वयंमेव आचारादि धर्म की इस प्रकार शिक्षा दी— हे देवानुप्रिय! इयं समिति से चलना चाहिए, निर्दोष पृथिवी पर ठहरना चाहिए, पृथिवी को प्रमार्जन करके बैठना चाहिए, भुजा को तकिया बना कर, सम्तारक के ऊपर एक कपडा विछा कर शरीर की प्रमार्जना करके सामायिक आदि का उच्चारण करके सोना चाहिए, निर्दोष भोजन करना चाहिए, हित मित प्रिय वचन बोलना चाहिए, इस प्रकार प्रमाद और निद्रा का त्याग कर भूत (सब वनस्पति) जीव (पंचेन्द्रिय) सत्व (पृथ्वी पानी अग्नि और वायु) की समय पूर्वक रक्षा करनी चाहिए। सुबाहुकुमार ने श्रमण भगवान् महावीर के समीप इस धर्मोपदेश को सुनकर सम्यक् प्रकार अंगीकार किया। वह पूर्वोक्त आज्ञानुसार ही चलता, उठता बैठता निद्रा और प्रमाद को त्याग कर के प्राण भूत जीव और सत्वों की रक्षा करता था ॥ ६७ ॥

मूलम्— तते गं मे सुयाङ्कुमारं अणगारं जाते
 इरियासमिण जाव धंभचारं । तते गं से सुयाङ् अणगारं
 समणस्स भगवओ महावीरस्स त्हास्वाणं थेराणं अंतिए
 सामाह्यमाहयाडं एक्कारसअंग्गाडं अहिज्जेनि, अहिज्जिक्का
 वट्ठहिं चउत्थच्छट्टम ० जाव तवोविहाणेहिं अप्पाणं
 भावेत्ता वट्ठहिं वासाडं सामण्णपरियागं पाउणित्ता मासियाए
 संलेहणाए अप्पाणं भूसित्ता सट्ठिभत्ताडं अणसणाए छेदिक्का
 आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालमासे कालं किच्चा सोह-
 म्मे कप्पे देवत्ताए उववण्णे । से णं ततो देवलोगाओ आउ-
 क्खणं भवक्खणं टिठक्खणं अणंतरं चयं चट्ठत्ता माणु-
 स्सं विग्गहं लभिहिति, लभित्ता केवलं योहिं बुज्जिहिति,
 बुज्जिहित्ता त्हास्वाणं । थेराणं अंतिए मुंडे भवित्ता जाव
 पव्वहरसति । से णं तत्थ वट्ठं वासाडं सामन्नपरियागं पाउणि-
 त्ता आलोइयपडिक्कंते समाहिपत्ते कालगए सणंकुमारं देवत्ताए
 उववन्ने । से णं ताओ देवलोगाओ त्हेव माणुस्सं पव्वज्जा,
 त्हेव महासुक्के, ताओ देवलोगाओ त्हेव माणुस्सं पव्वज्जा
 त्हेव आणाए ताओ देवलोगाओ त्हेव मणुस्सं पव्वज्जा, त्हेव
 आरणाए, ताओ देवलोगाओ त्हेव माणुस्सं पव्वज्जा, त्हेव
 सव्वट्ठसिद्ध, से णं देवलोगाओ अणंतरं चयं चट्ठत्ता कहिं
 गच्छिहिति, कहिं उववज्जिहिति ? गोयमा ! महावि देहे
 वासे जाडं इमाडं कुलाडं भवंति, अट्ठाडं दिक्काडं वित्ताडं
 विच्छिण्णविउलभवणसघणासणजाणवाहणाडं बहुघणबहु-
 जातरुवरययाडं आओगपओगसंपउत्ताडं विच्छड्डियपउर-
 भत्तपाणाडं बहुदासीदासगोमहिसग्वेलगप्पभूयाडं बहुजणा
 स्स अपरिभूयाडं तहप्पगारेसु कुलेसु पुमत्ताए पच्चायाहिति ।

तए णं तस्स दारगस्स माया नवणं मासाणं बहुपडिपुत्राणं
सुरूवं दारयं पयाहिति, जहेव पुवं तहेव नेयवं
जाव*भोय-रणं नोवलिप्पइ। तहेव मित्तनाइनियगसंबंधि-
परिजयेणं, से णं तहारूवाणं थेराणं अंतिए केवलं बोहि
बुद्धिहिति। केवल मुंडे भविता आगाराओ अणगारियं
पव्वइस्सति। से णं अणगारे भविस्सति, इरियासमिए जाव
सुहुयहुयासणो इव तेयसा जलंते। तस्स णं भगवओ अणु-
त्तरेणं नाणेणं एवं दंसणेणं चरित्तेणं आलएणं विहारेणं अज्ज-
वेणं महवेणं लाघवेणं खंतीए गुत्तीए मुत्तीए अणुत्तरेणं सव्व-
संजमतवसुचरियफलनिव्वाणमग्गेणं अप्पाणं भावेमाणस्स
अणंते अणुत्तरे कसिणे पडिपुण्णे निरावरणे निव्वाघाए
केवलवरनाणदंसणे समुप्पज्जिहिति। तते णं से भगवं अरहा
जिणे केवली भविस्सइ। सदेव मणुयासुरस्स लोगस्स परि-
यागं जानिहिइ पासिहिइ, तं जहा— आगतिं गतिं ठिति
चवणं उववायं तक्कं पच्छाकडं पुरेकडं मणो— माणंसियं
खइयं भुत्तं कडं पडिसेवियं आवीकम्मं रहोकम्मं अरहा
अरहस्स भागी तं तं कालं मणवयकायजोगे वट्टमाणाणं
सव्वलोए सव्वजीवाणं सव्वभावे जाणमाणे पासमाणे
विहरिस्सइ। तते णं से सुवाहू केवली एयारूवेणं विहारेणं
विहरमाणो वइइं वासाइं केवलपरियागं पाउणित्ता अप्पणो
आउसेसं आभोएत्ता वइइं भत्ताइं पच्चक्खाइस्सइ, पच्चक्खा-
इत्ता वइइं भत्ताइं अणसणाए छेदिस्सइ, छेदिता जस्सट्टाए
कीरइ नग्गभावे मुंडभावे केसलोचे वंभचेरवासे अणहाणं
अदंतवणं अछत्तं अणुवाहणं भूमिसिज्जाओ फलहसिज्जा-

ओ परधरपवेसो लद्दावलद्दाइं माणावमाणाइं परेहिं हीलणा-
 ओ निंदणाओ विमणाओ गरहणाओ तज्जणाओ तालणा-
 ओ परिभवणाओ पव्वहणाओ उच्चावया विह्वा यावीमं
 परीसहोवसग्गा गामकंठगा अहियासेज्जंति तमट्ठं आराहेइ,
 आराहिता चरमेहिं जसासनीसामेहिं मिज्जिहिइ, बुज्जिहिइ
 मुच्चिहिइ परिनिव्वाहिइ सव्वदुक्खाणमंनं करेहिइ । सेवं
 भंते! सेवं भंते! भगवं गोयमे समणं भगवं महावीरं वंदनि
 णमंसति, वंदित्ता णमंसित्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावे-
 माणे *विहरति । एवं खलु जंबू!समयेणं जाव संपत्तेणं सुह-
 विवागाणं पढमज्जयणस्स अयमट्ठे पत्तत्तेत्ति वेमि ॥ ६८ ॥

पढमज्जयणं समत्तं ।

भावार्थ—अब मुवाद्दुकुमार मुनि ईर्यामिति से युक्त (यावत) ब्रह्मचारी हुआ । तदनन्तर मुवाद्दुकुमार मुनि ने श्रमण भगवान् महावीर जैसे ईर्यामिति आदि के पालनेवाले स्थविरों के समीप सामायिक आदि ग्यारह अंगों का अध्ययन किया । अध्ययन करके बहुत से चतुर्भक्त (उपवास) पशुभक्त (वेला) वगैरह (यावत) नाना प्रकार के तपों द्वारा आत्मा का चिन्तन करके, बहुत वर्षों तक श्रामण्यपर्याय (मुनि-अवस्था) का पालन करके एक मास की मंलेखना करके आत्मचिन्तन करते हुए एक महीने का अन्नशन करके, अलोचना और प्रतिक्रमण करके, समाधि पूर्वक आयु पूर्ण होने पर काल करके सौधर्मकल्प में (प्रथम देव-लोक में) देव होगा । तदनन्तर वह मुवाद्दुकुमार का जीव पहले देवलोक से आयुक्षय भवक्षय और स्थितिक्षय करके मनुष्य होगा । फिर जैनधर्म को समझकर उसी प्रकार के स्थविरों के समीप मुण्डित

होकर (यावत्) दीक्षा लेलेगा। वहा बहुत वर्षों तक साधु-पर्याय को पालकर आलोचना और प्रतिक्रमण करके समर्पण करके सनत्कुमार देवलोक में देव उत्पन्न होगा। फिर वह तीसरे स्वर्ग से उसी प्रकार मनुष्य भव पाकर दीक्षा लेकर ब्रह्मलोक में देव होगा। फिर उस देवलोक से उसी तरह मनुष्य भव पाकर, दीक्षा लेकर, उसी तरह महाशुक स्वर्ग में देव होगा। उस स्वर्ग से उसी प्रकार मनुष्य होकर, दीक्षा लेकर आनत स्वर्ग में देव होगा उस देवलोक से चयकर मनुष्य होकर, दीक्षा लेकर उसी प्रकार चारण स्वर्ग में देव होगा। उससे चयकर मनुष्य भव पाकर दीक्षा ले कर सर्वार्थसिद्धि में देव होगा। उस देवलोक से चय कर सीधा कहा जायगा ? कहा उत्पन्न होगा ? हे गौतम! महाविदेह क्षेत्र में धनादि से परिपूर्ण, प्रतापी, दानादि गुणों से प्रसिद्ध, तथा जिन में विस्तीर्ण और बहुत से भवन शयन आसन यान वाहन हैं और बहुत धनादय-चादी सोने वाले हैं, जिन में लेन देन या व्याज आदि का काम होता है। भोजन पान का बहुत दान दिया जाता है, बहुत से दासी काम गाय भेस बैल आदि हैं, बहुत आदमी भी जिनका अपमान नहीं कर सकते—ऐसे कुलों में महा पुरुष रूप से जन्म लेगा। तदनन्तर उस बालक की माता पूरे नव महीने वीन जाने पर (यावत्) सुन्दर बालक का प्रसव करेगी। जन्म आदि का वर्णन जैसा पहले किया था, उसी प्रकार समझ लेना चाहिए। (यावत्) वह बालक भोग-रज से लिप्त नहीं होगा। पहले कहे अनुयाय मित्र जाति सगे सम्बन्धियों और नौकर चाकरों में भी मोहित नहीं होगा। तदनन्तर वह मुवाहुकुमार का जीव उसी प्रकार के स्वविरा के समीप केशलि-धर्म को समझकर, मुण्डित होकर गृहस्थावस्था को त्यागकर मुनि दीक्षा से दीक्षित होगा। वह अनगार होगा। ईर्या आदि समितियों से युक्त होकर (यावत्) अच्छी तरह जाज्वल्यमान अग्नि की नाई तेज-से देदीप्यमान होकर

भगवान् के कइ हण सर्वोत्तम जन स्थीन प्रौग चाग्रि म भणित होकर, उपाश्रय छोडकर विहाग करने हण, प्रार्थन मार्य लोचन भान्ति गुणि और मुक्ति (निलोभता) सत्य समय तब चाग्रि योग इनके फल रूप मोक्ष के मार्ग द्वारा आत्मा को भावना करना हुआ, अनन्त अनुत्तर अश्यावात निगमण परिपूर्ण उनम केवलज्ञान प्रोग कवलक्षण वाला होगा ! तब वह अर्हन् जिन प्रौग कवली हागा । देवलोक मनुष्यलोक और अमुरलोक (अशोचोक) को सभन पर्याय को जानेगा देखेगा । अर्थान् — जीव जग न आया जाय करने हे, भव-चरित , च । (पर्याय का त्याग) उत्पत्ति, विचार, अग निया जाने कला, पीछे किया हुआ, मन ने सोचा हुआ नष्ट हुआ, भोगा हुआ किया हुआ, नेयन किया हुआ, प्रगट और गुन कामो को जानगा देखेगा । सर्वथा एकान्त में नहीं रहने वाला, देव और मनुष्य ने निग हुआमना के समस्त जीवों के हर समय होने वाले मन उचन रूप सम्बन्धी सब भाग का जानता हुआ देखता हुआ विहाग करेगा ।

अनन्तर, मुवाह केवली इन प्रकार विहाग करने हण तहत वषों तक केवली अश्या में रहकर, अपने प्रायुर्कर्म का अग जानकर अनेक भक्त-प्रत्याग्यान द्वारा अनशन करेगा । ऊँके जिनके लिए—नमना मुगिटनपन केडालोच करना त्रयचर्च पालन, स्नान न करना, दातन न करना, छत्र न धारण करना, जूत न पहनना, अग्नी पर सोना चतुर्मास में पाटे पर सोना मिश्रा,के लिए पर घर में गमन, तभी भोजन का मिलना कभी न मिलना प्रादर अनादर म समभाव रखना, दूसरों के नीच वचन सुनना, निन्दित होना, लोगो क नामने विहाग के वचन सुनना, वृणा नहना, प्रगुति उठाकर कट गये अपशब्द सुनना कोडे आदि की माग सहना,निग्नकार प्रोग पीटा नहना, छोटी बडी अनेक प्रकार की परिपह और उपनर्ग जो कि इन्द्रियों को कटक रूप ह, ये

सन—सहन किये जाते हैं, उम पदार्थ (मोक्ष) का आराधन करेंगे, आराधन करके अन्तिम श्वास लेकर सिद्ध (कृतकृत्य होंगे, बुद्ध होंगे, आठ कर्मों से मुक्त होंगे, निर्वाण (कर्म रूप अग्नि के शान्त होने से शान्ति) प्राप्त करेंगे और सब दुखों का अन्त करेंगे । गौतम गणवर बोले—हे भगवन् ! ऐसा ही है ऐसा ही है । इतना कहकर श्रमण भगवान् महावीर की वन्दना और नमस्कार करके सयम और तप सं आत्मा की भावना करते हुए विहार करने लगे ।

हे जम्बू ! इस प्रकार श्रमण भगवान् महावीर ने (यावत्) मोक्ष जाते हुए सुखविपाक के प्रथमाध्ययन का वह अर्थ प्ररूपण किया है ।

मने (सुवर्मा स्वामी ने) जैसा श्री श्रमण भगवान् महावीर से सुना है, वैसे कहा है ॥ ६८ ॥



इस प्रकार सुखविपाकसूत्र में सुत्राहुकुमार

अनगाण का वर्णन करने वाला

प्रथम-अध्ययन

समाप्त

३आ



द्वितीय अध्ययन ।

मूलम्— विनियस्स गं उक्खेवां--

एवं खलु जंघु! तेणं कालेणं तेणं समाग्गं उसभपुरे
गागरं धूमकरंडउज्जाणे, धन्नो जक्खो, धणावहो राया, सरस्सं
देवी, सुमिणदंसगां, कहणं, जम्मणं वालत्तणं कलाओ य,
जुव्वणे, पाणिग्गहणं दाओ पासाट ० भोगायजहा सुवाहु-
स्स । नवरं-भह्णंदी कुमारे सिरिदेवीपामोक्खणं पंचसया,
मामी समोसणं मावगधम्मं पुव्वभवपुच्छा— महाविदेहे
वासे पुंउरीकिणी नगरी विजयते कुमारे, जुगयाह नित्थयरे
पडिलाभिए माणुमसाउण निघट्टे इहं उप्पत्ते सेसंजहा सुवा-
हुस्स जाव महाविदेहे वासे मिज्झिहिति बुज्झिहिति
मुज्झिहिति परिनिव्वाहिति, सब्बदुक्खाणमंनं करेहिति ॥२॥

भावार्थ — अत्र दृग्ने अध्ययन का अर्थ कहते हैं—

हे जंघु! उम काल में उस समय में ऋषभपुर नामक नगर था ।
उसमें स्तवकरंड उद्यान था । वहा धन्य नामक यक्ष था । धनावह नामक
राजा था । सरस्वती गनी थी । रत्न का देखना स्वयं का राजा से कहना,
पुत्र का जन्म होना, नान्यायगा, ७२ कलाओं का अध्ययन करना, जीवन
भवस्था का नर्गन, पाच सौ स्त्रियों से पाणिग्रहण , दहज महल गहना
आदि का देना, भोग भोगना आदि सुवाहुकुमार के समान जानना चाहिए ।
विशेष यह है कि नाम भद्रनन्दि कुमार था । उनके श्रंद्देवी वगैरह पाच
सौ स्त्रियां थी । भगवान् महावीर समप्रशरण सहित पधारि । उनके समीप
उसन श्रावक धर्म स्वीकार किया । गौतम स्वामी ने भद्रनन्दि कुमार के
पूर्वभय पूछे ! भगवान् महावीर ने कहा-- महाविदेह क्षेत्र में पुंउरीकिणी
नगरी थी । विजयकुमार नाम था । युगनाहु तीर्थकर से प्रतिबोधित
होकर, मनुष्य आयु वाधा था । फिर यहा (ऋषभपुर नगर में) उत्पन्न हुआ ।

शेष सत्र कथा सुबाहुकुमार समान जानना । (यावत्) महाविदेह क्षेत्र में सिद्ध होगा, युद्ध होगा, मुक्त होगा, निर्वाण प्राप्त करेगा और सर्व दुखों का अन्त करेगा ॥२॥

दूसरा अध्ययन समाप्त हुआ ॥



तृतीय अध्ययन.

मूलम्— तच्चरस्स उक्खेवो—

वीरपुर नगरं, मणोरमं उज्जाणं, वोरकण्हो जक्खो मित्ते राया, सिरी देवी, सुजाए कुमारे, बलसिरीपामोक्खा पंचसयकन्ना, सामी समोसरणां, पुब्बभवपुच्छा—उसुयारे नयरे उसभदत्ते गाहावई पुप्फदत्ते अणगारे पडिलाभिए मणुस्साउसे निबद्धे । इह उप्पन्ने जाव महाविदेहवासे सिज्झिभ्हिति ॥३॥

भावार्थ— वीरपुर नगर में मनोरम नाम का उद्यान था । उस में वीरकृष्ण नाम के यक्ष देवता का यक्षायतन था । नगर का मित्र नाम का राजा था । और श्री नामकी रानी थी । उनका सुजात नामका कुमार था । उसके बलश्री प्रमुख पाचसौ स्त्रिया थीं । वहा भगवान् महावीर स्वामीका समवसरण आया । गौतम स्वामी ने सुजातकुमारके पूर्वभव पूछे । भगवान महावीरने कहा- इपुकार नगरमें ऋषभदत्त गाथापतिने पुष्पदत्त अनगार को दान दिया था । वहा मनुष्य आयु का बध करके यहा उत्पन्न हुआ है । (यावत्) महाविदेह क्षेत्र से सिद्ध होगा ॥३॥

॥ तीसरा अध्ययन समाप्त हुआ ॥

चतुर्थ अध्ययन ।

मूलम्— चउत्थस्स उक्खेवो—

विजयपुरं नगरं, पंदणवणं उज्जाणं, असोगो जक्खो,

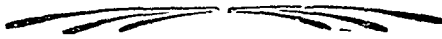
वासवदत्ते राया, कण्हा देवी सुवासवे कुमारं भद्रापामोक्खा-
णां पंच सया जाव पुञ्चभवे कोसंबी णगरी धणपाले राया,
वेसमणभदे अणगारे पडिलाभिए इह जाव सिद्धे ॥४॥

चउत्थं अज्जयणं ॥

भावार्थ—विजयनगर मे नन्दनवन उद्यान था । उममें अशोक नामके यक्ष का यक्षायतन था । नगर का राजा वामवादत्त और गनी कृष्णा थी । कुमार का नाम वामव कुमार था । भद्रा प्रभृति पाच सौ स्त्रिया थी । (यावत्) वह कुमार पूर्व भव मे कोशाम्बी नगरी का वनपाल नामक राजा था । वसमणभद्र मुनि को दान दिया था । एहा (यावत्) उत्पन्न हुआ और सिद्ध होगा ॥४॥

वासयकुमार का वर्णन करने वाला

चौथा अव्ययन नमात हुआ



पंचम-अध्ययन

मूलम्—पंचमस्स उक्खेवो—सोगंधिया णगरी, नीला सोए उज्जाणे सुकालो जक्खो, अप्पडिहओ राया, सुकन्ना देवी महचंदे कुमारं, तस्स अरहदत्त भारिया, जिणदासो पुत्तो, नित्थरागमणं, जिणदासपुञ्चभवो, मज्झमिया णगरी, मेहरहो राया, सुधम्मं अणगारे पडिलाभिए, जाव सिद्धे ॥५॥

पंचम अज्जयणं समत्तं



भावार्थ—सौगन्धिका नगरी मे नीलाशोक उद्यान था । उममे सुकाल नामके यक्ष का यक्षायतन था । राजा अप्रतिहत और गनी मुकन्धा थी । महचद

कुमार था । उसकी चरहृत्ता स्त्री और जिनदास पुत्र था । तीर्थकर आये । गणवर भगवान् ने जिनदास के पूर्वभव पूछे । भगवान् ने कदा-माव्य-मिका नगरी में सुवर्म राजा ने मेवग्य अनगार को दान दिया [यावत्] मिद्ध होगा ॥ ५ ॥

पाचत्रा अव्ययन ममाप्त ।

छठा अध्ययन ।

मूलम्—छट्स उक्खेवो—कण्णपुरं गगरं सेयासोयं उज्जाणं वीरभदो जक्खो, पियचंदो राया, सुभद्दा देवी, वेसमणे कुमारे जुवराया, सिरीदेवीपामोक्खा पंचसयकन्ना, पाणिग्गहणं तित्थयरागमणं, धनवती जुवरायपुत्ते, जाव पुव्वभवो—मणिवद्या नगरी, मित्तो राया, संभूतिविजए अणगारे पडिलाभिते. जाव सिद्धे ॥ ६ ॥

छट्ठं अज्झयणं समत्तं ।

भावार्थ—कनकपुर नगरमें श्वेताशोक उद्यान था । जिनमें वीरभद्र नामके यक्षका यक्षायतन था । नगरका राजा प्रियचन्द्र और रानी सुभद्रा थी । युवराज वेश्रमणकुमार था । श्रीदेवी प्रभृति पाचसौ कन्याए उसे परिणार्ई गई । तीर्थकर भगवान् आये । उन्होंने धनपति युवराजके पुत्रके पूर्वभव बताए कि— [यावत्]पणिपदा नगरी में मित्र नामक राजा था । समूतिविजय अनगारको दान देकर यहा उत्पन्न हुआ और [यावत्] मिद्ध होगा ॥ ६ ॥

छठवा अव्ययन ममाप्त हुआ ।

सप्तम— अध्ययन ।

मूलम्—सत्तमस्स उक्खेवो— महापुरं गगरं, रत्तासोगं उज्जाण, रत्तपाओ जक्खो, वल्ले राया, सुभद्दा देवी महव्वले

कुमारे रत्तवईपामोक्खाओ पंचसयकत्ताओ, पाणिग्गहणं,
जाव पुव्वभवो — गागदत्ते गाहावती, इंदपुरे अणगारे
पडिलाभिए जाव सिद्धे ॥ ७ ॥

॥ सत्तमं अज्झयणं समत्तं ॥

भावार्थ— महापुर नगर मरुत्ताजाक उवान था। उममे रत्तपाद
नामके यक्ष का यक्षायतन था। गजा का नाम बल था। गनी मुन्नट्टिदेवी
थी। महावल कुमार था। रत्तवती प्रमुख पात्र सौ कन्याओंके साथ पाणिग्रहण
हुआ। तीर्थकर भगवान् आए। पूर्वभव वताण— मणिपुर नगर म नागत्त
गाथापति ने इन्द्रपुर अनगारको दान दिया। (यात्रत) वह सिद्ध होगा॥७॥

सातवां अध्ययन समाप्त हुआ ॥

अष्टम— अध्ययन ।

मूलम्— अष्टमस्स उक्खेवो—

सुधोसं णगरं, देवरमणं उज्जाणं, वीरसेणो जक्खो,
अज्जुणो राया, तत्तवती देवी, भद्रनदी कुमारे सिरीदेवी
पामोक्खा पंचमया जाव पुव्वभवे पुच्छा—महाधोमे अणगारे
धम्मघोसे गाहावती धम्मसीहे अणगारे पडिलाभिए जाव
सिद्धे ॥८॥

अष्टमं अज्झयणं समत्तं ।

भावार्थ— सुधोप नगर म देवरमण उवान था। उममे वीरसेन
नामके यक्ष का यक्षायतन था। गजा अजुन था। गनी तत्त्वती
थी। भद्रनदी कुमार था। श्रीदेवी प्रमुख पात्र सौ कन्याएँ
गई। पूर्व भव इस प्रकार है—महाधोप नगर म धर्मधोप नेठ ने धर्ममिह
अनगार को दान देकर, यहा जन्म लिया है, (यात्रत्) सिद्ध होगा ॥८॥

आठवां अध्ययन समाप्त हुआ ।

नववाँ अध्ययन ।

मूलम्— नवमस्स उक्खेवो—

चंपा नगरी, पुत्रभद्रे उज्जाणे, पुत्रभद्रे जक्खो, दत्ते राया, रत्तवई देवी, महचदे कुमारे जुवराया, सिरिकंतापामो-
क्खाणं पंचसया कत्ता, जाव पुब्बभवो तिगिच्छी गगरी
जियसत्तू राया, धम्मवीरिए अणगारे पडिलाभिए जाव
सिद्धे ॥९॥

नवमं अज्झयणं समत्तं



भावार्थ— चम्पा नगरी में पूर्णभद्र उद्यान में पूर्णभद्र नामके यक्ष
का यक्षायतन था । राजा का नाम दत्त और रानी का नाम रत्तवती था ।
युवराज कुमार महचन्द्र था । श्रीकान्ता वगैरह पाच सौ कन्याओंसे विवाह
हुआ । पूर्व भव— तिगिच्छी नगरीमें जिनशत्रु राजाको धर्मवीर अनगार को
दान दिया था । वह यहा उत्पन्न हुआ, (यावत्) सिद्ध होगा ॥६॥

नववा अध्ययन समाप्त हुआ ।

दशवाँ अध्ययन

मूलम्— जति णं भंते! दसमस्स उक्खेवो—

एवं खलु जंबू! तेणं कालेणं तेणं समएणं साएयं गामं-
णगरं होत्था । उत्तरकुरुज्जाणे पासमिअो जक्खो मित्तनंदी रा-
या सिरिकंता देवी, वरदत्ते कुमारे वीरसेणा (वरसेणा) पामो-
क्खाणं पंचदेवीसया, तित्थयरागमणं, सावगधम्मं, पुब्बभव-
पुच्छा सतडुवारे नगरे विमलवाहणे राया धम्मरुचिनामं
अणगारं एज्जमाणं पासति । पासित्ता पडिलाभिते समाणे
संसार परित्तीकये मणुस्साडए निवद्धे, इहं उप्पत्ते, सेसं

जहा सुवाहुस्स कुमारस्स पोमरुत्तिता जाव पव्वजा, कप्पं-
तरिओ जाव सव्वट्टसिद्धे । ततो महाविदेहे, जहा दढपहत्तो
जाव सिज्झिह्ति बुज्झिह्ति मुच्चिह्ति परिनिव्वाहिति
सव्वदुक्खाणमत्तं करंहिति । एवं खलु जंबू! समणोणं
भगवया महावीरेणं जाव मंपत्तेणं सुहविवागाणं ढम्मस्स
अज्झयणस्स अयमट्ठे पत्तत्ते । मेवं भंते! मेवं भंते!
सुहविवागा ॥ १० ॥

दम्मं अज्झयणं समत्तं ।

भावार्थ— हे भगवान्! दश अजयन का वर्णन कैसा है? हे
जम्बू! उस काठ में उस समय नाकेन नामक नगर था। उस में उत्त-
रु उद्यान था। पानभिकुनामके यक्षका यथायतन था। भित्तन्ती राजा था।
श्रीकान्ता गनी थी। वरदत्त कुमार था। उनके वीरसेना (या वरसेना) प्रमुग
पाच सौ गनिशा थीं। जहा तीर्थकर पगरे। जगदन ने श्रावकधर्म स्वीकार
किया। गणधर महागन ने उसके पूर्वभय पूछे। भगवान् ने बताया—
शतद्वार नगर में विमलवाहन राजा ने धर्मरत्न नामक भनगर को आता
देखा। देखकर, विविर्षुकर दान देकर भनाग को हलका किया। मनुष्य
आयु वाचकर यहा उत्पन्न हुआ है। जेप मन मुनाहुकुमारकी तरह जानना
चाहिए— पौषवमें आध्यात्मिक विचार पैदा हुआ (यावत्) और दीक्षित
हो गया। अनुरूप से कल्पों में (यावत्) और सर्वार्थनिद्रि
में देव होगा। पश्चात् महाविदेह क्षेत्रमें दृष्ट प्रति की नाटि (यावत्)
मिद्ध बुद्ध मुक्त और परिनिर्मुक्त होगा तथा सब दुर्गों का अन्त करेगा।

हे जम्बू! इस प्रकार श्रमण भगवान् महावीर ने (यावत्) मोक्ष को
प्राप्त होने हुए सुग विपाक के दसपे अजयन म यह अर्थ प्ररूपण
किया है। जम्बू स्वामी बोले—

हे भगवन् ! ऐसा ही है, ऐसा ही है ॥

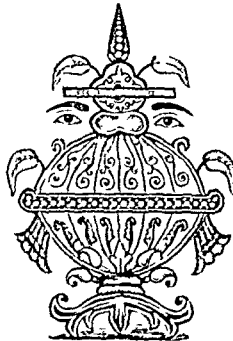
दसवा अध्ययन समाप्त हुआ

मूलम्— नमो सुयदेवघाए । विवागसुयस्स दो सुयक्खं-
धा—दुहविवागो य सुहविवागो य । तत्थ दुहविवागे दस अज्झ-
यणा एकासरगा । दससु चेव दिवसेसु उद्दिसिज्जंति । एवं सु-
हविवागो वि । सेसं जहा आधारस्स ॥

इइ सुहविवागसुत्तं समत्तं ।

भावार्थ— श्रुत देवता के लिए नमस्कार हो । विपाक सूत्र के दो श्रुतस्कन्ध हैं—एक दुखविपाक और दूसरा सुखविपाक । उनमें से दुखविपाक में दश अध्ययन हैं और वे एक सीखे हैं । इनका उपदेश दश दिनों में ही दिया जाता है । इसी प्रकार सुखविपाक भी जानना चाहिए । शेष सब आचाराङ्ग की तरह जानना चाहिए ।

॥ इस प्रकार सुखविपाक सूत्र समाप्त हुआ ॥



इसे असज्जाय टालकर जणाय से पढे

(मुग्धविपाकसूत्र)

शुद्धि--पत्र.

पृ	पं	अशुद्ध	शुद्ध
५	२४	तावज्ञान	तत्त्वज्ञान
६	=	सुवाह	सुवाह
११	५	वहा	वह
१३	१०	संपंडिय०	संपिटिय०
१७	२३	त्त	वृत्त
१६	३	सुभिक्ख	सुभिक्ख
२०	३	खजाने	यन्त्र खजाने
२०	२१	० ल्लियहिय०	०ल्लिहिय०
२१	३	पञ्चभवमाणी	पञ्चगुणभवमाणी
२६	५	उत्ती	उत्ती
३४	२५	केडे	कडे
४७	५	० गधम्मल्लाल०	० गधमरलाल०
४७	२२	प चात्	पश्चात्
४८	१६	चम्मक	चम्पक
६५	६	गाभे	गाभे
६५	२०	निस्वलेवे	निस्वलेवे
६६	२३	भगवान का पद्म	भगवान का मुँह पद्म
६८	१४	उठी हुई	उठे हुए
७८	१३	और	और
७६	१२	बला	बाला
८६	७	विहरा	विहार
९४	१६	वास आठिके पत्तेकी	वास की
११०	१	याकत्	यावत्
१२०	१२	तहारूवाण । थेराण	तहारूवाण थेराण
१२६	१५	वन्य नामक	धन्य नामक यत्त का
		यत्त था	यत्तायतन था

